मन-01

ब्रह्मर्षि तटवर्ती वीर राघव राव

मन

(PART-1)

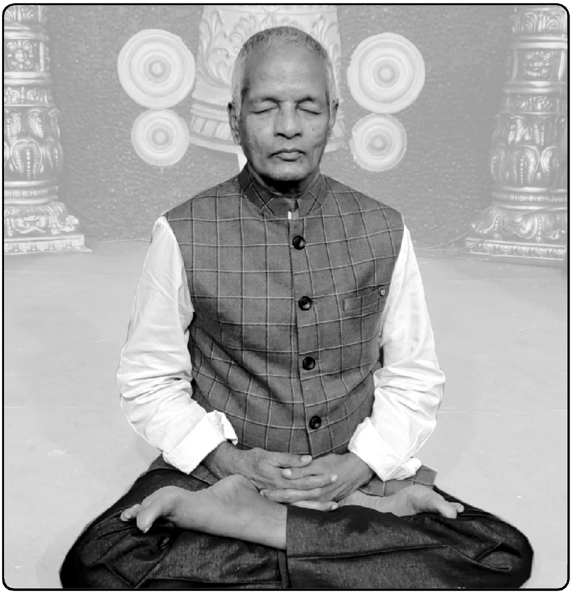

लेखक : ब्रह्मर्षि तटवर्ती वीर राघव राव

हिन्दी अनुवादः श्रीमति जे.पुष्पलता

For Books Please Contact :
TATAVARTHY VEERA RAGHAVARAO
Tatavarthivari Street, BHIMAVARAM-534201.
W.G.Dist., A.P. Ph: 94403 09812

Rs.80/-

ब्रह्मविध्वरिष्ठ तटवर्ति राज्यलक्ष्मी के हिन्दी किताब

1) एक और जन्म Rs.160/-
2) साधना में स्थितियाँ.................................. Rs.80/-
3) ज्ञान माला.. Rs.70/-
4) श्री दत्तात्रेय जी का 24 गुरूओं ।................. Rs.70/-
5) अगर मानव को योगी बनना है तो ?........... Rs.60/-
6) गुरु पूर्णिमा का विशिष्टता Rs.60/-
7) महात्माओं का संदेशों.............................. Rs.50/-
8) मानव के कर्तव्यों Rs.50/-
9) गुरु पूर्णिमा का विशिष्टता Rs.50/-
10)शाकाहार ही मानव का आहार है!.............. Rs.50/-
11)जीवन में सफलता प्राप्त करने के लिए? Rs.50/-

ध्यान की पद्धति - श्वास पर ध्यान

हर किसी को अपने लिए उपयुक्त सुखासन में आराम से बैठकर.. दोनों हाथों को मिलाकर... आंखों को बंद करके... सहज रूप से होने वाले उच्छ्वास और निश्वास पर गौर करना है!

बीच में कई सारे विचार हमारे मन में आते रहते हैं, उन सबका खंडन करते हुए... वापस हमारे ध्यान को श्वास पर लाना है... ध्यान भटकता रहेगा लेकिन वापस श्वास पर ध्यान लाते रहना है. धीरे-धीरे.. विचार रहित स्थिति प्राप्त होगी... चित्तवृत्ति का निरोध होगा मन शून्य बन जाएगा। मन शांति प्राप्त करेगा। यही ध्यान स्थिति है।

इस विचार रहित स्थिति में प्राप्त होने वाले शारीरिक, तंत्रिका व्यवस्था और आत्मानुभव पर ध्यान देते रहना है। उस स्थिति में असीमित विश्वमय प्राणशक्ति शरीर के अंदर प्रवाहित होकर तंत्रिका व्यवस्था की शुद्धि करती है। इस शक्ति के कारण सारे रोग दूर हो जाते हैं। तंत्रिका व्यवस्था की शुद्धि के कारण सारे कर्म दूर हो जाते हैं।

साधारण रूप से मनुष्य की उम्र जितनी है.. कम से कम उतने मिनट तक.. हर रोज दिन में दो बार... ध्यान करना है।

मन

मन के बारे में जानेंगे।

मनुष्य अर्थात तीन। 1.शरीर, 2.मन, 3.आत्मा। इन तीनों के मिलन से ही मानव होता है।

इनमें अब हम मन के बारे में जानेंगे। मन में चार भाग होते हैं। 1. मन, 2. बुद्धि, 3. चित्त, 4.अहंकार।

ये चारों भाग चार प्रकार के काम करते रहते हैं। इन्हीं को अंत:करण चतुष्टय कहा जाता है।

इसमें मन संकल्प-विकल्प करता रहता है। अर्थात करें या न करें ? जाएँ या न जाएँ ? फ़िल्म देखें या न देखें ? राजनीति में रहें या न रहें ? इस प्रकार मन डोलता रहता है।

तब क्या करना है, इसका अंतिम निर्णय करने वाली केवल बुद्धि ही है।

इसी प्रकार चित्त निरंतर किसी न किसी बात के बारे में सोचता ही रहता है, अर्थात चिंतन करता रहता है।

इसी प्रकार अहंकार हर समय चाहे कुछ भी करे, 'मैं, मैं' कहता ही रहता है। इस प्रकार मन के ये चारों भाग चार प्रकार से काम करते रहते हैं।

जो भी हो मनुष्य में मन की ही प्रमुख भूमिका होती है, क्योंकि मन के अनुसार ही शरीर, इंद्रियाँ काम करती रहती हैं। अर्थात मन जैसा कहता है, सभी इंद्रियाँ उसी प्रकार काम करती रहती हैं।

इसलिए शरीर से मन श्रेष्ठ है, ऐसा कहते रहते हैं। क्योंकि कहने वाला मन है, करने वाली इन्द्रियाँ हैं। यह मन विचारों का समूह है, इच्छाओं का भंडार है।

क्योंकि मनुष्य के जीवन में कष्टों का कारण मन ही है! इसी प्रकार भोगों का कारण भी मन ही है! इसीलिए उपनिषदों में कहा गया है ''मनुष्याणां मन एव कारणं बन्धमोक्षयोः।''

यह मन चार प्रकार के गुणों से युक्त होता है। मुख्य रूप से तमोगुण, रजोगुण, सत्त्वगुण, निर्गुण ऐसे गुण मनुष्यों में होते हैं। जिस प्रकार का गुण होता है, मनुष्य उसी प्रकार का व्यवहार करता रहता है।

इसलिए ऊपर से सभी मनुष्य ही हैं, लेकिन उनका व्यवहार अलग-अलग प्रकार का होता है। एक व्यक्ति के व्यवहार का दूसरे व्यक्ति के व्यवहार से कोई संबंध नहीं होता। इसका मुख्य कारण उनका मन ही है।

भगवद्गीता में मनुष्य के गुणों के अनुसार उसका व्यवहार होता है, यह बात निम्नलिखित श्लोक में वर्णित की गई है।

श्लो।। प्रकृतेः क्रियमाणानि गुणैः कर्माणि सर्वशः।
अहङ्कारविमूढात्मा कर्ताहमिति मन्यते।।

ता :- प्रकृति में स्थित सत्त्व, रज, तमो गुणों द्वारा ही समस्त कार्य होते रहते हैं, किन्तु अहंकार से युक्त मूढ़ लोग यह मानता है कि वही सब कुछ कर रहा है।

* इससे यह जानना चाहिए कि मनुष्य का जीवन उसके गुणों के

अनुसार होता है। ये गुण प्रकृति में स्वाभाविक रूप से की गई व्यवस्था हैं।

* मनुष्य अपने गुणों के अनुसार ही व्यवहार करता है। लेकिन वह दूसरों के कहने के अनुसार नहीं करता और वह किसी के भी नीति-वाक्यों को नहीं सुनता।

* जो भी हो, मनुष्य का जीवन अच्छा होना है तो सबसे पहले अपने गुणों को बदलना चाहिए। यह बहुत-बहुत महत्वपूर्ण है।

* कोई भी हो, सबसे पहले अपने गुणों को बदलने पर ध्यान केंद्रित करना चाहिए।

* यदि बुरे गुण होंगे, तो बुरे काम करते हैं, जीवन में बुरे फल प्राप्त करते हैं। इसी प्रकार यदि अच्छे गुण होंगे, तो अच्छे काम करते हैं, जीवन में अच्छे फल प्राप्त करते हैं।

* किसी का भी गुण बदल जाए, तो वह बुरे काम नहीं करता, पाप नहीं करता, अधर्म का आचरण नहीं करते और सृष्टि के विरुद्ध कार्य नहीं करते। तब कष्ट नहीं आते। इतना ही नहीं, वे जो करना चाहिए वही करते हैं, और उससे जीवन में लाभ प्राप्त करते हैं।

* मुख्य रूप से मनुष्य के कुछ भी न दे पाने का कारण उसका लोभ गुण ही है। लोभ गुण की वजह से मनुष्य दे नहीं पाता। लेकिन सृष्टि में दिए बिना कुछ भी नहीं मिलता, मनुष्य स्वयं दिए बिना ही यह सोचता रहता है कि उसे नहीं आया, नहीं आया। कैसे आएगा? नहीं आएगा, लेकिन नहीं आया, कहकर दुखी होता है।

विचित्र बात यह है कि यदि गुण बदल जाए, तो मनुष्य दिए बिना नहीं रह सकता। जिसने दिया है, वह प्राप्त किए बिना नहीं रह सकता।

इसलिए किसी को भी पहले अपने गुणों को बदलने का प्रयास करना चाहिए। उसके लिए गहन ध्यान-साधना करनी चाहिए, सात्त्विक शाकाहार लेना चाहिए। वर्तमान परिस्थितियों के अनुसार, इतनी गहन साधना केवल भीमवरम में ही प्राप्त कर सकते हैं।

इसलिए यदि कोई भी कुछ महीनों के लिए भीमवरम आ जाए, तो वह गहन ध्यान-साधना करता है। उसके मन में परिवर्तन आता है, अर्थात उसके गुण बदल जाते हैं। किसी के कहने की आवश्यकता के बिना वे स्वयं ही स्वाभाविक रूप से ही देते रहते हैं, उसके फलस्वरूप उन्हें प्राप्ति भी होती रहती है।

गुण के अनुसार ही ग्रहण करने की शक्ति होती है। जो ग्रहण कर सकता है, वही अपने गुण के अनुसार ही सेवा कर सकता है।

इसीलिए कहा जाता है कि ''धन होने वाला नहीं देता, लेकिन मन होने वाला देता है।''

* बुरे गुणों वाले लोग सामने वाले में केवल बुराई ही देखते हैं। वे उनके साथ प्रेम से और मित्रता से नहीं रह पाते।

* बुरे गुणों वाले लोग अज्ञान में होते हैं।

* बुरे गुणों वाले लोग मूर्खता में होते हैं।

* बुरे गुणों वाले लोग अविवेक में होते हैं।

* बुरे गुणों के वजह से अहंकार, ममत्व, स्वार्थ, अशांति, इच्छाएँ और मांसाहार अधिक होते हैं।

* बुरे गुणों वाले लोग मूर्खों के और अज्ञानियों के गर्भ में जन्म लेते हैं।

इसलिए यह जानना चाहिए कि मन ही सब कुछ का मूल है। क्योंकि मन के अनुसार ही मनुष्य का व्यवहार होता है, जीवन भी उसी पर आधारित होता है। इसलिए आइए जानें कि जैसा मन होगा, वैसे ही फल प्राप्त होंगे।

जीवन में अच्छे फल प्राप्त करने के लिए मन में अच्छा परिवर्तन लाने का प्रयास करना चाहिए। क्योंकि किसी को भी स्वाभाविक रूप से मन में परिवर्तन आने के लिए लगभग 100 से 150 जन्म लगते हैं। लेकिन यदि वे अपनी बुद्धि का उपयोग करके ''श्वास पर ध्यान'' रखकर ध्यान-साधना करें, तो इसी जन्म में वे अपने अंदर ये परिवर्तन ला सकते हैं और अपने जीवन को बदल सकते हैं।

मुख्य रूप से मन में तीन प्रकार की स्थितियाँ होती हैं। 1)निश्चलता, 2) मन की शुद्धता, 3) मन की शून्यता।

स्वाभाविक रूप से किसी का भी मन चंचल होता है। लेकिन यदि ''श्वास पर ध्यान'' रखकर ध्यान करें, तो मन निश्चल हो जाता है। यदि इस प्रकार मन को निश्चल कर लिया जाए, तो जीवन में कुछ प्रकार के लाभ प्राप्त किए जा सकते हैं।

इसी प्रकार यदि ''श्वास पर ध्यान'' की साधना को छोड़े बिना कुछ महीनों तक गहन रूप से करें तो निश्चल हुआ मन धीरे-धीरे शुद्ध होता जाता है। यदि इस प्रकार मन को शुद्ध कर लिया जाए, तो बुद्धि विकसित होती है और विवेक उत्पन्न होता है।तब मनुष्य और भी बहुत से लाभ प्राप्त कर सकता है।

इसी प्रकार यदि इस ''श्वास पर ध्यान'' रखने वाले ध्यान साधना

को और भी अधिक गहनता से कुछ वर्षों तक करते रहें, तो धीरे-धीरे शुद्ध हुआ मन शून्य होता जाता है। इस प्रकार मन को शून्य करने की वजह से उनमें धीरे-धीरे ज्ञान का उदय होता है। जब यह ज्ञान अग्नि की तरह प्रज्वलित होता रहता है, तो उनके संचित कर्म, प्रारब्ध कर्म और आगामी कर्म सभी दग्ध हो जाते हैं। ऐसे लोगों को फिर जन्म ही नहीं होता। इतना ही नहीं, यदि उस मन को शून्य कर लिया जाए, तो ऐसा कोई लाभ नहीं होता जो प्राप्त न हो।

इसलिए प्रत्येक व्यक्ति को "श्वास पर ध्यान" रखने वाली ध्यान-साधना करते हुए इस प्रकार के परिवर्तन लाने चाहिए और जीवन में महान-महान लाभ प्राप्त करने चाहिए।

इतना ही नहीं, मन तीन प्रकार की अवस्थाओं में होता है।

1. चेतन अवस्था (Conscious Mind)

जाग्रत अवस्था में होना। अर्थात सतह पर स्थित अवस्था। वर्तमान समय में मनुष्य दिन के समय इस जाग्रत अवस्था में रहते हुए सभी प्रकार के काम कर रहे हैं। वे इस अवस्था में अपने शरीर, इन्द्रियों का उपयोग करते रहते हैं। इस प्रकार की अवस्था को जाग्रत अवस्था कहते हैं।

2. अंतःचेतन अवस्था (Sub Conscious Mind)

स्वप्नावस्था में होना। अर्थात थोड़ा गहराई में स्थित अवस्था। इस अवस्था में शरीर और इन्द्रियाँ काम नहीं करतीं, वे विश्राम करती रहती हैं, लेकिन मन निरन्तर काम करता रहता है। यह अवस्था रात में सोने के समय होती है। वह मन जाग्रत अवस्था में घटित घटनाओं की कल्पनाएँ करता रहता है। इस प्रकार मन के द्वारा की गई कल्पनाओं को ही सपने

कहते हैं। यह अवस्था स्वप्नावस्था में आने की वजह से स्वप्न भी कहलाती है।

3.अधि चेतनावस्था (Supra Conscious Mind)

सुषुप्तावस्था में होना। और भी गहराइयों में स्थित है। इस अवस्था में शरीर, इन्द्रियाँ तथा उनके साथ मन भी काम नहीं करते, केवल आत्मा ही होती है। इस अवस्था को गहरी निद्रा अवस्था भी कहा जाता है। यहाँ कितने भी घंटे सोए हों, ऐसा लगता है मानो केवल कुछ ही मिनट बीते हों।

इसीलिए जो लोग रात 8 बजे सो जाते हैं, वे सुबह 7 बजे उठते ही कहते हैं, क्या इतनी जल्दी सुबह हो गई ?

इस प्रकार किसी का भी मन तीन प्रकार की अवस्थाओं में होता है।

इसी प्रकार इस मन के द्वारा किए जाने वाले कामों के बारे में कुछ और बातें इस पुस्तक के माध्यम से जानेंगे।

''जैसा राजा, वैसी प्रजा''

''जैसा राजा, वैसी प्रजा'' अर्थात ''राजा के अनुसार प्रजा होती है।'' ''इसका अर्थ है कि मन के अनुसार ही इन्द्रियाँ होती हैं।''

और अधिक गहराई से तथा हम विशेष रूप से कहें तो चाहे कोई भी राज्य हो राजा के अनुसार ही प्रजा का व्यवहार होता है। अब वैसे राज्य नहीं हैं। बस कुछ ही देशों में राजशाही है, लेकिन लगभग सभी जगह राजाओं का शासन समाप्त हो चुका है। अब तो अधिकांश जगह लोकतांत्रिक शासन है, लेकिन जब राजा होते थे, तब वही राजा कानून बनाने वाला होता था।

वह जितना कहता था उतना ही होता था, और वह जो भी निर्णय लेता था, उसका पालन करना सभी के लिए अनिवार्य था। इसलिए राजा के अनुसार ही उस राज्य में रहने वाली प्रजा का व्यवहार होता है। राजा अन्त:पुर के अंदर रहता है, लेकिन प्रजा बाहर रहती है। प्रजा राजा की आज्ञा के अनुसार ही चलती है। अब सरकारें आ गई हैं। यह सरकार जो भी निर्णय लेती है, प्रजा को उसका पालन करना पड़ता है।

पत्री जी ने कहा है कि ''इस सृष्टि में ऊपरी लोकों में भी दिखाई नहीं देने वाली एक सरकार है, उस सरकार के अनुसार ही यह संसार चलाया जाता है।'' इसी प्रकार उस ऊपर की सरकार के अनुसार ही यह संसार चलाया जाता है। यहाँ की सरकारों के अनुसार, यदि राज्य सरकार हो तो उस राज्य की प्रजा उसके अनुसार आचरण करती है। इसी प्रकार यदि देश की सरकार हो, तो वह सरकार जो निर्णय लेती है, उसके अनुसार

उस देश की प्रजा उसका पालन करती रहती है।

इसी प्रकार किसी राज्य का राजा जैसा कहता है, उसी प्रकार उसकी आज्ञा के अनुसार ही प्रजा आचरण करती है। स्वाभाविक रूप से, यदि वह राजा अच्छा हो, तो वह समस्त प्रजा को अच्छे मार्ग पर चलाता है। ऐसे राजा के शासन में सभी लोग आनंदपूर्वक रहते हैं। लेकिन यदि राजा बुरा हो, तो वह प्रजा को बुरे मार्ग पर चलाता है और सभी दुःखी रहते हैं।

इसी प्रकार वर्तमान शासन व्यवस्था में भी, यदि उस सरकार का मुख्यमंत्री या उस देश का प्रधानमंत्री अच्छा हो, तो सभी लोगों को लाभ प्राप्त होता है। यदि वे ही बुरे हों, तो सभी लोग पीड़ा सहते रहते हैं।

राजा जो करने के लिए कहे, प्रजा वही करती है। राजा सेवा करने को कहे तो प्रजा सेवा करती है, और राजा लूटने को कहे तो प्रजा लूटती है। इसलिए यदि राज्य समृद्ध होना है, तो अंतःपुर में रहने वाला राजा अच्छा होना चाहिए। यह एक राज्य और उसके राजा से संबंधित बात है। लेकिन मनुष्य के विषय में, मनुष्य के अंतर में अर्थात मनुष्य के शरीर के अंदर होने वाला ‘‘मन ही’’ राजा है।

मनुष्य अर्थात बाहर दिखाई देने वाला शरीर, उसके अंदर स्थित मन, और मन के भीतर स्थित आत्मा इन सबकी बात हम कर रहे हैं। लेकिन ये इन्द्रियाँ, शरीर आदि सब मनुष्य के अंतर में स्थित मन के अनुसार ही काम करते हैं, उसी के अनुसार चलते हैं।

इसलिए मनुष्य के विषय में, उसके ‘‘अंतर में’’ स्थित यही

‘‘मन’’ राजा है। तो फिर राज्य में ‘‘बाहर रहने वाली प्रजा’’ कौन है ? अर्थात मनुष्य में स्थित ‘‘इंद्रियाँ।’’ जैसे प्रजा राजा के कहे अनुसार काम करती है, वैसे ही इन्द्रियाँ मन के कहे अनुसार काम करती रहती हैं। यदि राजा अच्छा हो, तो सभी लोग अच्छे काम करते रहते हैं, उनका व्यवहार भी अच्छा होता है।

इसी प्रकार यदि मन अच्छा हो अर्थात शुद्ध हो, तो इन्द्रियाँ अच्छे काम करती हैं, सभी को आनंद देने वाले काम करती हैं, सेवा करती हैं, और सभी अच्छे काम ही करती हैं। और ऐसा करने की वजह से वह मनुष्य सुखी होता है, आनंदित रहता है।

लेकिन यदि अंतर में स्थित मन मलिन हो, अर्थात बुरा हो, तो यह शरीर, इन्द्रियाँ सभी बुरे काम करती हैं, सभी को दुःख पहुँचाती हैं।

क्योंकि हम कहते हैं न कि प्रजा राजा के अनुसार ही होती है ? इसी प्रकार मन के अनुसार ही इन्द्रियाँ और शरीर, अर्थात मन के अनुसार ही मनुष्य का व्यवहार होता है। प्रजा को देखकर बताया जा सकता है कि राजा कैसा है। क्योंकि यदि प्रजा अच्छे काम करती रहती है, तो यह समझा जा सकता है कि राजा अच्छा है।

यदि वे एक-दूसरे को हिंसा पहुँचाते हुए, पीड़ा देते हुए, धोखा देते हुए, लूटते हुए ऐसा तरह-तरह के अनुचित काम करते रहते हैं, तो यह समझा जा सकता है कि राजा भी वैसा ही होगा। इसी प्रकार मनुष्य की इन्द्रियाँ जो काम करती हैं, उनके आधार पर हम बता सकते हैं कि मन कैसा है। वह हर समय गालियाँ देता रहता है, उसे रुलाता है, इसे रुलाता है, उसे दुःख पहुँचाता है, इसे दुःख पहुँचाता है, धोखे देता रहता है, या

फिर लूटता रहता है।

ऐसे काम इन्द्रियों के माध्यम से करता रहता है। हाथ चोरी करते रहते हैं, और पैर उसे-इसे लात मारते रहते हैं। आँखें जो नहीं देखना चाहिए, वही देखती रहती हैं; कान जो नहीं सुनना चाहिए, वही सुनते रहते हैं; और मुँह जो नहीं बोलना चाहिए, वही बोलता रहता है।

इस तरह इन्द्रियों द्वारा किए जाने वाले कामों के आधार पर हम जान सकते हैं कि मन कैसा है। इन्द्रियाँ अच्छे काम करती हैं, तो मन अच्छा है, इसी प्रकार यदि इन्द्रियाँ सही काम नहीं करतीं, तो हम जान सकते हैं कि मन बुरा है।

जिस प्रकार प्रजा के आधार पर राजा को जाना जा सकता है, उसी प्रकार इन्द्रियों के आधार पर मन के बारे में जाना जा सकता है। जिस प्रकार अंत:पुर में होने वाला राजा के आधार पर बाहर की प्रजा का व्यवहार कैसा होगा, उसी प्रकार मनुष्य के आंतरिक गुणों, अर्थात मन के गुणों के आधार पर जिस प्रकार राज्य के लिए राजा महत्वपूर्ण होता है, वैसे ही मनुष्य के लिए मन भी उतना ही महत्वपूर्ण होता है।

यदि राजा बुद्धिमान हो, तो वह अपनी बुद्धिमत्ता से सभी को अच्छी तरह मार्ग पर चलाता है। चाहे कैसी भी बाधाएँ आई हों, अथवा कैसी भी आपदाएँ आई हों, कोई उसके राज्य पर आक्रमण करने आया हो, वह अपनी बुद्धिमत्ता से उन परिस्थितियों को पार कर लेता है। प्रजा की रक्षा करता है। वह अनेक प्रकार के उपायों का उपयोग करके, उस परिस्थिति के अनुसार अपनी बुद्धि और विवेक का प्रयोग करता है, उस परिस्थिति को पार कर लेता है और प्रजा की रक्षा कर पाता है।

इसी प्रकार किसी भी मनुष्य का मन जब शुद्ध हो जाता है, तब उसकी बुद्धि विकसित होती है। ऐसे लोग बहुत बुद्धिमत्ता का प्रदर्शन करते हैं। वे अच्छे निर्णय ले सकते हैं। इसीलिए कहा जाता है, ''जैसा राजा वैसी प्रजा।'' राजा जैसा होता है, वैसी ही प्रजा भी होती है। अर्थात मन जैसा होता है, मनुष्य के द्वारा किए जाने वाले काम भी वैसे ही होते हैं। और हम जान सकते हैं कि अंतर में स्थित मन के अनुसार ही इन्द्रियाँ और शरीर काम करते हैं।

इसलिए देखिए, सभी मनुष्य ही हैं, फिर भी यदि आप ध्यान से देखें, तो देखने में सभी का व्यवहार एक जैसा नहीं होता। कुछ लोग राक्षसों की तरह व्यवहार करते हैं, कुछ लोग सैडिस्टों की तरह व्यवहार करते हैं, और कुछ लोग दूसरों को हानि पहुँचाते हैं, उन्हें रुलाते रहते हैं, धोखा देते हैं, नुकसान पहुँचाते हैं, कुछ लोग स्वार्थ के साथ व्यवहार करते हैं।

इसके अलावा कुछ लोग सेवा करते हैं और कुछ लोग दूसरों के लिए अपने जीवन का उपयोग करते हैं। कुछ लोग जीवों के लिए, प्राणियों के लिए जीवन लगाते हैं। इस प्रकार यदि हम समाज में, संसार में ध्यान से देखें, तो मनुष्यों में तरह-तरह से व्यवहार करने वाले लोग होते हैं। इन सबका मुख्य कारण अंतर में स्थित मन ही है। इसलिए यह जानना चाहिए कि मनुष्य के अंतर में मन ही सबसे महत्वपूर्ण है। जिस प्रकार राज्य में राजा महत्वपूर्ण होता है, उसी प्रकार अंतर में मन ही महत्वपूर्ण होता है, यह जानना चाहिए।

इसलिए मनुष्यों को बाह्य से भी अधिक अंतर को महत्व देना

चाहिए। अर्थात शरीर से अधिक मन को महत्त्व देना चाहिए। क्योंकि करवाने वाला मन है, और करने वाले इन्द्रियाँ, शरीर हैं। लेकिन मनुष्य का जीवन किस पर आधारित है, अर्थात यह इन इन्द्रियों द्वारा किए जाने वाले कामों पर ही आधारित है। वे जैसे काम करते हैं, उन्हें वैसे ही फल प्राप्त होते हैं। अच्छे काम करते हैं तो अच्छे फल मिलते हैं, बुरे काम करते हैं तो बुरे फल मिलते हैं, हिंसा करते हैं तो रोगों से पीड़ित होते हैं, और सभी की सेवा करते हैं तो भोगों के साथ सुखी रहते हैं।

इन इन्द्रियों द्वारा किए जाने वाले कामों पर ही उनके जीवन के फल आधारित होते हैं। इसलिए कोई भी हो, अंतर को अर्थात इस बाह्य शरीर से अधिक मन को महत्त्व देना चाहिए। जब मन को महत्त्व दिया जाता है, तब जीवन में बहुत लाभ प्राप्त करते हैं। लेकिन संसार में मनुष्यों को यह समझ में न आने के कारण वे हर समय बाह्य रूप से दिखाई देने वाले इस शरीर को महत्त्व देते रहते हैं, लेकिन अंतर में स्थित मन को महत्त्व नहीं देते हैं।

देखिए संसार में बहुत से लोग दीक्षाएँ ले रहे हैं। अयप्पा दीक्षा हो, गोविन्द माला हो, भवानी दीक्षा हो, शिव दीक्षा हो, इस प्रकार न जाने कितनी दीक्षाएँ लोग ले रहे हैं। किस के लिए? अर्थात वे ऐसे काम, जो नहीं करने चाहिए, उन्हें करने के कारण उस परिवार में कष्ट, नुकसान और झगड़े आ रहे हैं।

उनकी जो आदतें हैं, उनके कारण धन खर्च होता है। इसी प्रकार शराब पीना, व्यभिचार करना, सिगरेट पीना, लॉटरी और जुआ जैसी आदतों के कारण वे न केवल बहुत नुकसान उठाते हैं, बल्कि बहुत धन भी खर्च

करते हैं और परिवार के लोगों को सुख-शान्ति से वंचित कर देते हैं।

कमाया हुआ सारा धन परिवार पर खर्च किए बिना, बच्चों पर और पत्नी पर खर्च किए बिना, इन्हीं के लिए खर्च करते रहते हैं। उसके कारण उस परिवार के लोगों को सुख-शान्ति नहीं मिलती। यदि ऐसा करते रहते हैं, तो धीरे-धीरे झगड़े होते रहते हैं।वह अपनी पत्नी से पैसे माँगता रहता है, और अगर वह पैसे नहीं देती, तो उसे मारता है। यदि ऐसा होता रहता है, तो दोनों अलग हो जाते हैं, या फिर झगड़े करते-करते एक-दूसरे से दूर होते रहते हैं।

जब ऐसा होता है, तो यह इन्हीं आदतों की वजह से है न? मैं नुकसान झेल रहा हूँ। फिर कुछ दिनों बाद ऐसा लगता है कि इन आदतों को छोड़ देना ही अच्छा है। यह सब देखने के बाद किसी को भी ऐसा लगता है। तब वह सोचता है। इनसे बाहर निकलना चाहिए, यानी यह बात तब समझ में आती है। यानी, उन्होंने अयप्पा दीक्षा ली है, इन लोगों ने भवानी मालाएँ धारण की हैं। यह सोचकर कि इन सबको करने से परिवर्तन आएगा, वह ''दीक्षा'' लेते हैं।

दीक्षा लेने वाले लोग उन 40 दिनों तक दीक्षा के नियमों के रूप में अनेक प्रकार के नियमों का पालन करते रहते हैं। अर्थात उन 40 दिनों तक वे ब्रह्मचर्य का पालन करते हैं, इतनी ठंड में भी ठंडे पानी से स्नान करते हैं, बिना चप्पलों के चलते हैं, मांसाहार का त्याग करते हैं और पवित्रता के साथ आहार लेते हैं।

यहाँ यदि आप ध्यान दें, तो 40 दिनों तक अनेक नियमों का

पालन करते हैं। चालीस दिन पूरे होने के बाद वे पहाड़ पर दर्शन के लिए जाते हैं। भगवान पहाड़ पर विराजमान हैं, इसलिए ये लोग उस पहाड़ पर जाते हैं। दीक्षा के नियम पूरे होने के बाद दर्शन करके वापस लौट आते हैं। विचित्र बात यह है कि जिन आदतों को ये लोग छोड़ना चाहते हैं, दर्शन होते ही घर पहुँचने से पहले ही वे फिर से उन्हीं सभी बुरी आदतों के आदी हो जाते हैं। जिन आदतों को ये लोग छोड़ना चाहते थे, उनमें से एक भी नहीं जाती, बल्कि वे और भी बढ़ जाती हैं।

ऐसे घर आने के बाद, उस घर के लोग, पत्नी हो या परिवार के सदस्य हो, क्या सोचते होंगे? वे सोचते होंगे कि हमारा आदमी बहुत बदल गया होगा। चालीस दिनों तक दीक्षा लेकर वह बहुत निष्ठा से रहा। वे सोचते हैं कि निश्चित रूप से परिवर्तन आएगा। लेकिन पहले से भी ज़्यादा हो जाती हैं। आश्चर्यचकित हो जाते हैं! यह जाकर वापस आ गया, फिर भी कोई बदलाव नहीं आया। इस तरह कितने ही वर्षों तक जाकर आने के बाद भी न बदलने वाले बहुत से लोग हमें दिखाई देते रहते हैं।

तो इसका मुख्य कारण क्या है? इन लोगों ने चालीस दिनों तक दीक्षा के नियमों के नाम पर शरीर को कितने समय तक दंडित किया। यानी ज़मीन पर सोए, बिना चप्पलों के चले यानी शरीर को दंड देने जैसा ही है। ठंडे पानी से स्नान किया, यानी शरीर को दंड देने जैसा ही है। ब्रह्मचर्य का पालन किया, यानी शरीर को दंड देने जैसा ही है। इस प्रकार शरीर को अनेक प्रकार से दंडित करते हुए दर्शन के लिए गए।

ऐसे जाकर आने के बाद फिर से पहले जैसा हो जाता है। कारण क्या है? यहाँ इन्होंने शरीर को दंडित किया, अर्थात गलतियाँ करने वाले

शरीर को दंड दिया। लेकिन इस शरीर से ये सारे काम ''मन ही करवाता है।'' तो क्या मन को दंडित किया? नहीं मन को कोई दंड नहीं दिया, मन के साथ कुछ भी नहीं किया। इन लोगों ने हर समय केवल इस बाहरी शरीर को ही महत्व दिया, लेकिन ''इस शरीर से ये सारे काम करवाने वाले मन को बदलने का प्रयास नहीं किया।''

शरीर को बदलने के लिए उन्होंने सभी नियमों का पालन किया, लेकिन चाहे जितना भी पालन किया हो, शरीर फिर से पहले की तरह ही व्यवहार करना शुरू किया। कारण यह है कि इस शरीर से गलतियाँ करवाने वाले मन को बदलने का प्रयास इन्होंने नहीं किया। लेकिन मन को बदलने का प्रयास करना चाहिए।

लेकिन यदि ये लोग उन 40 दिनों के नियमों का पालन न भी करें, तो भी यदि मन को दंडित करें, तो अर्थात उसे बदलने का प्रयास करें, तो ये लोग निश्चित रूप से इन सब से बाहर निकल चुके होंगे। जिन-जिन आदतों को ये लोग छोड़ना चाहते थे, वे सभी आदतें अपने-आप छूट जातीं। इन लोगों ने शरीर को कितने समय तक नियंत्रित रखने की कोशिश की, लेकिन मन को नियंत्रित करने की कोशिश नहीं की। शरीर को अनेक प्रकार से दंडित किया, लेकिन मन को दंडित नहीं किया।

इसलिए याद रखिए। मनुष्यों को शरीर से अधिक मन को महत्व देना चाहिए। यानी ''बाहरी से अधिक आंतरिक को'' महत्व देना चाहिए। तब किसी भी मनुष्य में परिवर्तन आएगा। यह बात हर व्यक्ति को समझनी चाहिए। अंतर में स्थित मन पर अधिक ध्यान देना चाहिए। लेकिन मन के बारे में कोई नहीं सोचता। लेकिन उस मन को बदलने की शक्ति केवल

''श्वास पर ध्यान'' और ध्यान-साधना को ही है।

उन चालीस दिनों में जो लोग घर पर ही रहकर प्रतिदिन दो-तीन घंटे अपनी ''श्वास पर ध्यान'' केंद्रित करते हुए ध्यान कर सकें, उनमें वास्तव में बहुत बड़ा परिवर्तन आएगा। जिन आदतों को वे छोड़ नहीं सकते ऐसा सोचते थे, उन्हें भी वे छोड़ देंगे।

वे बदलते नहीं। वे ऐसा सोचते हैं कि ''इनको जन्म से आई हुई बुद्धि काष्टों पर रखने पर भी नहीं जाता'' इस तरह उन्हें छोड़ देते हैं। लेकिन जब भी श्वास पर ध्यान लगाकर ध्यान करते हैं, तो उनमें बहुत परिवर्तन आता है, कितना भी बड़ा राक्षस क्यों न हो, वह भी इंसान बन जाता है।

इसलिए, जैसे अंत:पुर में रहने वाला राजा अच्छा हो तो प्रजा कैसे सुखी रहती है और अच्छे काम करती है, वैसे ही यदि अंतर स्थित मन अच्छा हो, तो सभी इंद्रियाँ भी अच्छे काम करती हैं। आखिरकार भगवान भी मनुष्य के ''आंतरिक गुणों को ही'' महत्व देते हैं, और उसकी ''अंतर-शुद्धि को ही'' देखता है।

कुछ उदाहरण लें, तो सत्य साईं बाबा जी हमेशा कहते रहते हैं कि अपने गुणों को बदलना चाहिए। लोग भजन कर रहे हैं, गाने गा रहे हैं, उन गानों के लिए धुनें बना रहे हैं, धुनें बदल रहे हैं, लेकिन क्या उनके गुण बदल रहे हैं, ऐसा पूछा करते थे? वे कहते थे कि यदि गुण नहीं बदलते, तो किए जाने वाले भजन व्यर्थ हैं।

वे आगे यह भी कहते थे, कपड़े बदल रहे हैं, लेकिन क्या गुण बदल रहे हैं या नहीं? यह नहीं देख रहे हैं। इसलिए अपने गुणों को

बदलने का प्रयास कीजिए। सत्य साईं बाबा जी ने भी कहा है कि उसे महत्व देना चाहिए। इसी प्रकार श्री पोतुलूरि वीरब्रह्मेन्द्र स्वामी जी ने भी क्या कहा है, तो

"स्नान में नहीं है, पान में नहीं है,
मंत्र-तंत्रों में महिमा नहीं है।
गुण यदि स्थिर हो जाए, तो वही महान योगी बन जाता है।
कालिकम्मा हंस कालिकाम्बा!"

अर्थात यहाँ उन्होंने कहा है कि मनुष्य के गुण बदलने चाहिए। गुण किससे संबंधित है? मन से संबंधित है। मन के गुण बदलने चाहिए, अच्छे बनने चाहिए और शुद्ध होने चाहिए। कोई भी कहे, सब यही बात कहते हैं।

आप देखिए, बहुत से लोग नदी-स्नान, पुष्कर-स्नान, गंगा-स्नान आदि न जाने कितने प्रकार के स्नान करते रहते हैं। किसलिए? अर्थात वे मानते हैं कि इससे पुण्य मिलता है और यह मनुष्य को पवित्र बनाता है। ऐसे गोदावरी पुष्कर-स्नान हों या कृष्णा पुष्कर-स्नान, अथवा किसी भी पवित्र नदी में डुबकी लगाकर स्नान किया जाए, उससे कोई लाभ नहीं है।

इतना ही नहीं उन्होंने यह भी कहा कि उन तीर्थों का जल चाहे गंगा-तीर्थ का हो या मंदिरों में मिलने वाला तीर्थ-जल हो, उसे पीने (पान करने) से भी कोई लाभ नहीं होता। इसी प्रकार, मन में जपे जाने वाले मंत्रों में भी, तथा शरीर से किए जाने वाले बाहरी प्रदर्शनों जैसे दंडवत प्रणाम, साष्टांग प्रणाम, उठक-बैठक करना, गालों पर थप्पड़ मारना और विभिन्न

प्रकार से शरीर को यातना देने में कोई महिमा नहीं है, ऐसा उन्होंने कहा।

अर्थात इसका मतलब यह है कि शरीर से कुछ भी करने पर या मन से कुछ भी करने पर कोई भी व्यक्ति दु:ख से बाहर नहीं निकल सकता। कारण यह है कि इन सब में कोई महिमा नहीं है, ऐसा श्री वीरब्रह्मेन्द्र स्वामी जी बता रहे हैं।

यहाँ कहा गया है कि मंत्र का अर्थ है ''मनुनात त्रायते इति मन्त्र:'' तथा तंत्र का अर्थ है ''तनुनात त्रायते इति तन्त्र: ।'' अर्थात मन से किया जाने वाला मंत्र कहलाता है और तन (शरीर) से किया जाने वाला तंत्र कहलाता है।

हमने यह समझा कि गुण का सुधरना अर्थात मन का शुद्ध हो जाना है। यानी अनुपयोगी और मलिन तमोगुण समाप्त हो जाना चाहिए, अनुपयोगी रजोगुण भी समाप्त हो जाना चाहिए। और स्पष्ट रूप से कहें तो केवल तमोगुण और रजोगुण ही नहीं, बल्कि सत्त्वगुण भी समाप्त हो जाना चाहिए। मनुष्य को निर्गुण होना चाहिए। ऐसा व्यक्ति ही महान योगी होता है। वही दु:ख का सदा के लिए निवारण करके मोक्ष प्राप्त करता है। श्री वीरब्रह्मेन्द्र स्वामी जी यही बता रहे हैं।

इसलिए इसे अच्छी तरह याद रखिए। यदि कोई भी राजा जैसे मन के गुणों को बदलने का प्रयास करना चाहता है, तो उसे अपने मन को शुद्ध करना चाहिए। मन की शुद्धि किस हद तक होनी चाहिए? अर्थात जब आप ध्यान करते हैं, तब ''तीन अवस्थाएँ'' आती हैं। पहली अवस्था में चंचल मन निश्चल हो जाता है। यदि उस निश्चल अवस्था में कोई घंटों तक बैठ सके, तो धीरे-धीरे वह निश्चल मन निर्मल हो जाता है, अर्थात

मन शुद्ध हो जाता है, यानी उस मन में परिवर्तन आता है।

जो लोग उस साधना को और अधिक गहनता से करते रहते हैं, उनका मन निश्चित रूप से शुद्ध होता जाता है और उनके गुण भी धीरे-धीरे बदलते जाते हैं। श्री वीरब्रह्मेन्द्र स्वामी जी के अनुसार, चाहे कोई तीर्थस्थलों पर जाए, नदियों में स्नान करे या और कुछ भी करे, उससे आपके मन की शुद्धि नहीं होगी और मनुष्य में वास्तविक परिवर्तन नहीं आएगा। वह परिवर्तन केवल पत्री जी द्वारा हमें प्रदान किए गए ''श्वास पर ध्यान'' के अभ्यास से ही आता है।

''पुराणों में'' भी बताया गया है कि मन को शुद्ध करना चाहिए। गुणों को बदलना चाहिए, यह बताने के लिए कुछ कथाएँ भी सुनाई जाती हैं।

महाभारत की पौराणिक कथा यह है कि महाभारत युद्ध के बाद सभी पांडवों ने मिलकर तीर्थयात्रा पर जाने का सोचा। उन्होंने यह भी सोचा कि केवल हम ही नहीं, बल्कि हमारे साथ श्रीकृष्ण जी भी आएँ, तो अच्छा होगा।

तब धर्मराज श्रीकृष्ण जी के पास जाते हैं और उनसे कहते हैं, हम सब तीर्थस्थलों का भ्रमण करना चाहते हैं और तीर्थयात्राएँ करना चाहते हैं। यदि आप भी हमारे साथ आएँ , तो बहुत अच्छा होगा। वह उनसे कहता है, हम सब अपने परिवार के साथ जा रहे हैं, इसलिए आपको भी आना चाहिए। तब श्रीकृष्ण जी ने कहा, मेरे पास समय नहीं है, इसलिए अभी आना मेरे लिए संभव नहीं है।

फिर भी धर्मराज ने हार नहीं मानी। उन्होंने बहुत ज़ोर देकर

कहा, हम इतने लोग मिलकर जा रहे हैं, अगर आप नहीं आएँगे तो कैसे चलेगा? जब बहुत समझाने पर भी वे नहीं माने, तब श्रीकृष्ण ने कहा, बेटा! मैं इतना कह रहा हूँ, लेकिन तुम मेरी बात नहीं सुन रहे हो। तुम्हें संतुष्ट करने के लिए मैं एक काम बताता हूँ, यह कहकर उन्होंने एक बड़ी लौकी दी और बोले, इसे मेरा प्रतिनिधि मानकर जहाँ भी तुम जाओ, मेरी ओर से इसे अपने साथ ले जाना।

तब धर्मराज ने कहा, ठीक है, कम से कम इन्हें इनके प्रतिनिधि के रूप में ही साथ ले चलते हैं, और वे उस लौकी को अपने साथ ले गए। वे जहाँ भी जाते, उस लौकी को अपने साथ ले जाते। वे स्वयं जिस-जिस नदी में स्नान करते, वहाँ श्रीकृष्ण के प्रतिनिधि के रूप में उस लौकी को भी डुबोते। इसी प्रकार, जिस-जिस मंदिर में जाते, वहाँ भी उसे साथ ले जाकर दर्शन कराते।

इस तरह वे सभी तीर्थस्थलों और पवित्र धामों के दर्शन करके वापस लौट आए। वापस आने के बाद धर्मराज श्रीकृष्ण के पास जाकर बोले, आपके कहे अनुसार हमने सभी तीर्थस्थलों की यात्रा पूरी कर ली है। उन्होंने कहा जैसा आपने कहा था, आपके द्वारा दी गई इस लौकी को भी हम सभी तीर्थस्थलों पर ले गए और हर जगह घुमाया।

तब श्रीकृष्ण ने कहा, तीर्थयात्रा और पवित्र धामों के दर्शन करके लौटने वाले लोग संतर्पण के रूप में भोजन करवाते हैं। आप लोग भी भोजन करवाइए। उन्होंने कहा, इस लौकी को सभी पवित्र धामों में घुमाया गया है, इसलिए इस लौकी को पकाकर सबको परोस दीजिए।

तब धर्मराज ने उस लौकी से पुलुसु बनवाकर भोजन में सभी को

परोस दी। लेकिन वह बहुत कड़वी थी, इसलिए कोई भी उसे खा नहीं सका। सभी ने उसे थूक दिया और बीच में ही उठकर चले गए।

तब धर्मराज बहुत दु:खी हो गए। उन्होंने सोचा, यह क्या हुआ? श्रीकृष्ण ने ऐसी कड़वी लौकी पकाकर सबको परोसने के लिए क्यों कहा था? सभी लोगों के भोजन किए बिना ही बीच में उठकर चले जाने पर, धर्मराज थोड़े क्रोध में श्रीकृष्ण के पास गए। अरे कृष्ण! यह तुमने क्या कर दिया? वह तो कड़वी लौकी थी, उसे पकाने के लिए तुमने ही कहा था! उसे खाने के बाद सब लोग बीच में ही उठकर चले गए, ऐसा उन्होंने कहा।

श्रीकृष्ण ने ऐसे व्यवहार किया मानो उन्हें कुछ पता ही न हो। उन्होंने आश्चर्य से पूछा, अरे! क्या वह अभी भी कड़वी ही है? तुम लोग उसे इतने सारे तीर्थों में ले गए, अनेक नदियों में डुबोया। मैंने तो सोचा था कि उसका दोष दूर हो गया होगा। इतने तीर्थ घूमने के बाद भी क्या उसका दोष नहीं गया?

तब धर्मराज को समझ में आ गया। इन पवित्र तीर्थों की यात्रा करने से या कितने ही दर्शन करने से भी, यदि किसी भी व्यक्ति में कोई परिवर्तन नहीं आता, तो उससे कोई लाभ नहीं होता। सबसे पहले मन बदलना चाहिए। मन बदलने पर ही व्यक्ति को जीवन में लाभ मिलता है। लेकिन यदि मन नहीं बदलता, तो कोई भी लाभ नहीं होता। इसलिए धर्मराज ने समझ लिया कि केवल तीर्थयात्रा करने से कोई लाभ नहीं होता। उन्होंने समझ लिया कि मुझे यह बात समझाने के लिए ही श्रीकृष्ण ने इस प्रकार की लीला की थी।

इसलिए याद रखिए कि श्री वीरब्रह्मेन्द्र स्वामी जी ने भी हमें यही बात बताई है। उन्होंने कहा, ''स्नान में नहीं है, पान में नहीं है, मंत्र-तंत्रों में महिमा नहीं है।''

अर्थात चाहे नदियों में स्नान किया हो, चाहे पुष्करों में स्नान किया हो, चाहे मंदिरों में जाकर वहाँ का तीर्थ ग्रहण किया हो, चाहे कितने भी मंत्रों का जप किया हो, कुछ भी करें, कोई लाभ नहीं होता। लेकिन यदि ''गुण सुधर जाएँ'', अर्थात मन शुद्ध होन चाहिए, यानी बुरे गुणों से भरा हुआ मन शुद्ध हो जाएँ तो, अर्थात अच्छे गुणों की वजह से मनुष्य को लाभ मिलता है। इसी बात को श्री वीरब्रह्मेन्द्र स्वामी जी ने स्पष्ट रूप से कहा है।

भक्ति मार्ग में चाहे कितना भी करें, चाहे कुछ भी करें, हर व्यक्ति को यह देखना चाहिए कि उसके गुण बदले हैं या नहीं ? उसका मन बदला है या नहीं ? और उसका व्यवहार बदला है या नहीं ? यदि यह परिवर्तन नहीं आता, तो जान लेना चाहिए कि किए गए सभी प्रयास व्यर्थ हैं।

क्योंकि गुण बदलने पर ही व्यवहार बदलता है, व्यवहार बदलने पर ही काम बदलते हैं, और काम बदलने पर ही परिणाम अच्छे होंगे। लेकिन अगर काम सही नहीं हैं, यानी गुण नहीं बदलते और वह मन मलिन है, तो उससे कोई लाभ नहीं होता।

इसीलिए बड़े-बुज़ुर्ग मन के गुणों के बारे में ही बताते रहते हैं, क्योंकि मुख्य भूमिका मन ही निभाता है। मनुष्यों में मन जैसा कहता है, सभी इंद्रियाँ वैसा ही काम करती हैं। इसलिए जिस प्रकार किसी राज्य में प्रजा राजा के कहे अनुसार जैसा व्यवहार करती रहती है, वैसा ही काम

करती रहती है, उसी प्रकार मनुष्य के भीतर स्थित मन जैसा कहता है, ये इंद्रियाँ भी वैसा ही काम करती रहती हैं।

उस मन को शुद्ध करना चाहिए। उसके लिए 'श्वास पर ध्यान' की साधना करनी चाहिए। इसे अच्छी तरह याद रखिए ''जैसा राजा वैसी प्रजा'' का अर्थ है, ''जैसा मन, वैसे कार्य।'' यानी मन के अनुसार ही काम होते हैं। यदि मन शुद्ध हो, तो अच्छे काम होते हैं, और यदि मन अशुद्ध हो, तो बुरे काम होते हैं। क्योंकि जैसे-जैसे गुण बदलते हैं, वैसे-वैसे मनुष्य में अच्छा परिवर्तन आता है।

स साधना की वजह से और उसके अनुरूप सात्त्विक आहार ग्रहण करने की वजह से प्रत्येक व्यक्ति में अच्छा परिवर्तन आता है। वे अच्छे काम, लोक-कल्याणकारी कामों को करते हैं और सभी की सेवा करते हैं। इसीलिए सत्य साईं बाबा ने सभी को सेवा करने के लिए कहते थे, कारण यह है कि लोगों को लाभ पहुँचाया जा सके। सेवा कौन कर सकता है ? अर्थात वही लोग जिनका मन अच्छा हो और जिनमें अच्छे गुण हों। तो ऐसी स्थिति किसे आती है ? अर्थात जो लोग श्वास पर ध्यान की साधना अच्छी तरह करते हैं, उन्हीं को यह स्थिति आती है।

इसीलिए हम भीमवरम में हर महीने की 1, 2 , 3 तारीख़ को आत्मज्ञान प्रशिक्षण शिविर आयोजित कर रहे हैं। वहाँ हम प्रतिदिन 7 से 8 घंटे से भी अधिक समय तक ध्यान करवाते हैं। ऐसा क्यों ? क्योंकि केवल यह जान लेने से कि ध्यान महान है, कोई लाभ नहीं होता; उसका अभ्यास करने से ही लाभ मिलता है।

देखिए केवल सुन लेने से कोई लाभ नहीं होता, साधना करने से

ही लाभ मिलता है। इसलिए प्रत्येक व्यक्ति को भीमवरम जैसे आत्मज्ञान प्रशिक्षण शिविरों में भाग लेना चाहिए।

वहाँ लोग केवल पत्री जी द्वारा बताए गए ''श्वास पर ध्यान'' का ही अभ्यास करते हैं। वहाँ बहुत जल्दी विचारों से रहित स्थिति प्राप्त करके अपार शक्ति प्राप्त करते हैं। इस तरह घंटों-घंटों तक ध्यान करने से धीरे-धीरे उनमें परिवर्तन आता है। उनके गुण बदलते रहने की वजह से और उनका व्यवहार बदलते रहने की वजह से वे जो काम नहीं करने चाहिए, वे नहीं करते, बल्कि जो काम करने चाहिए, वही करते रहते हैं।

ऐसे अच्छे गुणों वाले लोग ही अच्छे काम करते हैं। इसलिए चाहे कोई भी हो, उसे अपने गुणों को निश्चित रूप से बदलना चाहिए। क्योंकि जिन लोगों में अच्छे गुण होते हैं और जो अच्छे सेवा-कार्य करते रहते हैं, वही वास्तविक लाभ प्राप्त करते हैं और उनका भविष्य महान बनता है। इसलिए मनुष्य के काम और व्यवहार उसके मन के अनुसार होते हैं। इसीलिए कहा जाता है, ''जैसा राजा - वैसी प्रजा।''

इसीलिए बड़ों ने कहा है - ''भावशुद्धि से ही ज्ञान की सिद्धि होती है।''

''भाव'' मन से संबंधित होता है। यदि मन ''शुद्ध'' हो, तो ''भाव'' भी शुद्ध होते हैं। यदि उसके ''भाव'' शुद्ध हों, तो उसे ''ज्ञान की'' सिद्धि होती है, अर्थात वह ज्ञान प्राप्त करता है।

ज्ञान की वजह से लाभ प्राप्त होते हैं। इसलिए यदि कोई धीरे-धीरे अपने मन को शुद्ध करने का प्रयास करें, तो उसके गुण बदलते रहते हैं और उसके भाव भी बदलते रहते हैं। भाव भी शुद्ध हो जाता है। तब वे

ज्ञानी बन जाते हैं।

पृथ्वी पर महान लोगों की बात करें, तो रमण महर्षि हों, विवेकानंद हों, सत्य साईं बाबा हों, योगी वेमना हों, परमहंस योगानंद हों, राघवेंद्र स्वामी हों - ऐसे अनेक महापुरुष हुए हैं। ये सब तो ज्ञानी ही हैं। दुनिया में उन सभी को बहुत महान माना जाता है और लोग उनके चरणों में गिरते हैं।

जब सत्य साईं बाबा थे, तब लोग उनके कहे अनुसार करते रहते थे और उनका अनुसरण करते रहते थे, क्योंकि उनके पास ज्ञान था। ऐसा ज्ञान तब प्राप्त होता है, जब भाव शुद्ध होता है। भाव-शुद्धि का मतलब है कि वह तब होती है, जब मन शुद्ध हो जाता है। मन की शुद्धि तीव्र ध्यान-साधना और सात्त्विक शाकाहारी आहार के कारण संभव होती है।

इसलिए याद रखिए, यदि "भाण्ड की शुद्धि न हो, तो खाना पकाने का" कोई लाभ नहीं होता। कारण यह है कि चाहे आहार कितना भी स्वादिष्ट बनाया जाए, यदि बर्तन शुद्ध न हो, तो बनाया गया सारा आहार व्यर्थ हो जाता है। उसी प्रकार यदि मन शुद्ध न हो, तो किए गए सभी काम व्यर्थ हो जाते हैं। वे फल देने के बजाय बुरे परिणाम उत्पन्न करते हैं। इसलिए जिस प्रकार "भाण्ड की शुद्धि के बिना किया गया खाना पकाना व्यर्थ होता है, उसी प्रकार भाव-शुद्धि के बिना किया गया काम चाहे कितना भी महान क्यों न हो, उसका कोई फल नहीं मिलता।"

एक बार फिर जान लीजिए, अपने भावों अर्थात मन और अंतःकरण को शुद्ध करना चाहिए। उसके लिए मृत (बासी) आहार ग्रहण नहीं करना चाहिए। इसके साथ-साथ तीव्र ध्यान-साधना भी करनी चाहिए।

इधर मृताहार अर्थात मांसाहार और सड़ा-गला आहार ग्रहण

नहीं करना चाहिए। मांसाहार कैसे आता है ? जब किसी जानवर को मारा जाता है, उसका प्राण ले लिया जाता है, तब आता है। जैसे ही प्राण निकल जाता है, उसे शव कहा जाता है। अर्थात हम कहते हैं कि वह जानवर मर गया है। यदि प्राण है, तो हम कहते हैं कि उसमें प्राण है। यदि उसमें प्राण नहीं है, तो हम कहते हैं कि वह मर गया है। ऐसा मृत आहार क्या होता है ? अर्थात कुछ ही मिनटों में वह सड़ने लगता है, बदबू आने लगती है, दुर्गंध फैलती है और उसमें कीड़े पड़ जाते हैं। वह बहुत भयानक और वीभत्स बन जाती है।

देखिए, अगर कोई कुत्ता सड़क के किनारे मरकर दो दिनों तक पड़ा रहे, तो देखिए क्या होता है। अगर आपके घर में कोई चूहा अलमारी के नीचे मर जाए, तो दो दिनों तक आप उस कमरे में जा भी नहीं सकते। उसे निकालकर चाहे कितना भी फिनाइल डालकर साफ़ कर लें, फिर भी उसकी बदबू तीन-चार दिनों तक नहीं जाती। उस मृत शरीर से, उस शव से इतनी दुर्गंध आती रहती है। यानी वह इतना भयानक होता है।

ऐसा आहार ग्रहण करने से मन शुद्ध कैसे होगा ? वह तो मलिन ही होगा, शुद्ध नहीं होगा। किसी भी परिस्थिति में उसकी शुद्धि नहीं होगी। इसीलिए पत्री जी सबसे पहले मांसाहार छोड़ने के लिए कहते हैं। ध्यान करने वालों को वे सबसे पहले कहते हैं कि उन्हें मांसाहार निश्चित रूप से छोड़ देना चाहिए। वे यह भी कहते हैं कि अगर तुम अभी ध्यान न भी करो, तो कोई बात नहीं, लेकिन मांसाहार ज़रूर छोड़ दो।

इसलिए यदि इसे नहीं छोड़ा जाए, तो ऐसे आहार का प्रभाव

निश्चित रूप से मन पर भी पड़ता है। उसका प्रभाव केवल मन पर ही नहीं पड़ता, बल्कि मन भी मलिन हो जाता है। जब मन मलिन हो जाता है, तो ऐसा मलिन मन वाला व्यक्ति केवल बुरे काम ही करता रहता है। जब कोई बुरे काम करता रहता है, तो उसके जीवन में बुरे परिणाम, अर्थात कष्ट, दु:ख और समस्याएँ ये सब आते रहते हैं।

इसलिए राजा जैसे मन को महत्व देना चाहिए। विशेष रूप से मैं एक बार फिर कह रहा हूँ। मांसाहार और अंडे छोड़ देने चाहिए। शाकाहार में भी लहसुन छोड़ देना चाहिए। सात्त्विक शाकाहार ग्रहण करना चाहिए। इसके साथ-साथ गहन ध्यान-साधना भी करनी चाहिए। गहन ध्यान-साधना का अर्थ घंटों-घंटों तक बैठना नहीं है। घंटों-घंटों तक ध्यान की स्थिति में, विचारों से रहित और मन के काम न करने की स्थिति में बैठना चाहिए।

इस प्रकार दृढ़ता के साथ आहार के नियमों का पालन करते हुए और तीव्र ध्यान-साधना करे, तो किसी का भी मन शुद्ध हो जाता है। अर्थात मन अच्छा बन जाता है।

भगवद्गीता में भी श्रीकृष्ण ने कहा है कि मन को केवल शुद्ध ही नहीं करना चाहिए, बल्कि उसे शून्य भी करना चाहिए। क्योंकि भीतर स्थित मन त्रिगुणों (सत्त्व, रज और तम) से युक्त होता है। भगवान श्रीकृष्ण ने कहा है कि इन त्रिगुणों का भी अतिक्रमण करना चाहिए।

श्लो।। त्रैगुण्यविषया वेदा निस्त्रैगुण्यो भवार्जुन।

निर्द्वन्द्वो नित्यसत्त्वस्थो निर्योगक्षेम आत्मवान्।।(भ.गी.2-45)

ता : - हे अर्जुन! वेद त्रिगुणात्मक संसार के विषयों को बताते

हैं। तुम त्रिगुणों से रहित रहो, द्वंद्वों से रहित रहो, निरंतर शुद्ध सत्त्व का आश्रय लिए रहो और योग-क्षेम की चिंता से रहित रहो और आत्मज्ञानी बनो।

इसलिए यूँ ही मन की शुद्धि करके ही संतुष्ट नहीं हो जाना चाहिए, बल्कि उससे भी अधिक गहराई तक पहुँचना चाहिए यही श्रीकृष्ण का संदेश है।

इसलिए मैं एक बार फिर कह रहा हूँ। ''जैसा राजा वैसी प्रजा,'' अर्थात राजा के अनुसार ही प्रजा होती है। अर्थात इसका आंतरिक अर्थ है – 'जैसा मन, वैसी इन्द्रियाँ'।

देखने में तो सभी मनुष्य ही हैं। पृथ्वी पर सभी को आँखें, नाक, मुँह और कान होते हैं। सभी को हाथ-पैर होते हैं, लेकिन भेद केवल उनके किए गए कामों का है। एक-दूसरे से कोई संबंध नहीं है। इसका मुख्य कारण यह है कि मन के गुण उसकी शुद्धता के अनुसार होते हैं।

तो फिर आपके गुण बदले हैं या नहीं? यह कैसे पता चलेगा? अर्थात यह स्त्रस्त्रआपके व्यवहार के अनुसार चलता है, आपके कामों के अनुसार पता चलता है और आपकी बातों के अनुसार पता चलता है।स्त्रस्त्र

यदि आप लगातार ध्यान करते रहते हैं, तो यह देखिए कि इन बातों में कोई परिवर्तन आया है या नहीं। यदि वह परिवर्तन आपके भीतर दिखाई दे, तो समझिए कि आप अच्छा ध्यान कर रहे हैं।

बहुत से लोगों को ध्यान के बारे में अनेक संदेह उठते हैं। वे तरह-तरह के प्रश्न पूछते रहते हैं। मैं सो रहा हूँ या ध्यान कर रहा हूँ? मैं श्वास का अवलोकन कर रहा हूँ या नहीं? ध्यान करने से पहले संकल्प

लेना चाहिए या नहीं ? कोई म्यूज़िक चलाना चाहिए या नहीं ? या फिर कुछ और करना चाहिए ? पिरामिड के नीचे बैठना चाहिए या कहीं और जाना चाहिए ? लोग इस तरह के अनेक प्रश्न पूछते रहते हैं।

लेकिन कुछ भी ज़रूरी नहीं है। आप जहाँ हैं, वहीं आराम से सुखासन में बैठ जाइए। पत्री जी कहते हैं, आपको जो भी आसन आरामदायक लगे, वही आसन ले लीजिए। अगर सोफ़े पर अच्छा लगे, तो सोफ़े पर बैठ जाइए। अगर बिस्तर पर अच्छा लगे, तो बिस्तर पर बैठ जाइए। अगर दीवार से टिककर अच्छा लगे, तो दीवार से टिककर बैठ जाइए। इसमें कोई नुकसान नहीं है।

इस प्रकार सिर को सीधा ही रखना ज़रूरी नहीं है। बहुत से लोग सोचते हैं कि सिर को सीधा रखना चाहिए। आप अपना सिर कितनी देर तक सीधा रख सकते हैं, जितनी देर आपका मन काम करता रहता है, उतनी देर ही आप अपना सिर सीधा रख सकते हैं।

जब "श्वास पर ध्यान" के कारण विचार रुक जाते हैं, तब वहाँ मन नहीं होता। जब मन नहीं होता, तब शरीर पर आपका नियंत्रण नहीं रहता। अपने-आप सिर झुक जाता है, शरीर भी झुक जाता है। मन होने पर ही आप शरीर को एक निश्चित स्थिति में रख सकते हैं। मन न होने पर शरीर पर आपका नियंत्रण नहीं रहता।

लेकिन यूँ ही बेवजह घबराकर यह-वह करके आप नुकसान न करें। आराम से " श्वास पर ध्यान रखकर ध्यान कीजिए। विचारों को कम कीजिए, मन को शुद्ध कीजिए और अपने गुणों को बदल लीजिए।

मन में अल्प भावना को छोड़कर, उन्नत और उदार भावना होनी चाहिए।

सहज रूप से संसार में कष्ट दूर करने के लिए बहुत से लोग पूजा कर रहे हैं, प्रार्थना कर रहे हैं, नमाज़ अदा कर रहे हैं, कीर्तन कर रहे हैं और स्तोत्रों का पाठ कर रहे हैं। लेकिन यह जानना चाहिए कि पूजा करना, प्रार्थना करना या नमाज़ अदा करना – इन सबका अर्थ भगवान से प्रार्थना करना और उनसे विनती करना है। अर्थात मुझसे कुछ भी नहीं हो सकता, मैं अल्प हूँ, मैं हीन हूँ, आप ही मेरी रक्षा करें, सब कुछ आप ही दें, मैं कुछ भी नहीं कर सकता ऐसा कहकर भगवान से विनती करना।

असल में आप भगवान को महान मानते हैं, तभी तो यह सब कर रहे हैं, है न ? यानी आपके भीतर अल्प भावना होने के कारण ही आप इस तरह भगवान से विनती कर रहे हैं।

इसी तरह भगवान का कीर्तन करना, भजन करना और स्तोत्रों का पाठ करना, ये सब भगवान की महानता का वर्णन करना, उनकी प्रशंसा करना ही है। अर्थात आप जैसा कोई नहीं है, ऐसा कुछ भी नहीं है जो आप न कर सकें और आपकी शक्ति का वर्णन नहीं किया जा सकता, इस प्रकार भगवान का तरह–तरह से कीर्तन करना।

इन स्तोत्रों के माध्यम से, जैसे विष्णु सहस्रनाम स्तोत्र, ललिता सहस्रनाम स्तोत्र आदि का पाठ करना, भजन करना, भजनों में भगवान की महानता का गुणगान करना, कीर्तन करना, इन सबका अर्थ यही है कि आप

जैसा कोई नहीं है, ऐसा कुछ भी नहीं है जो आप न कर सकें, आपकी शक्ति का वर्णन नहीं किया जा सकता। अर्थात भगवान का तरह-तरह से कीर्तन करना। इस प्रकार भगवान का कीर्तन करते हुए लोग, मैं कुछ नहीं कर सकता, मुझसे कुछ भी नहीं हो सकता, मैं शक्तिहीन हूँ, ऐसा मानकर स्वयं को शक्तिहीन समझकर उसी तरह व्यवहार करने लगते हैं।

देखिए छोटी-सी भी कठिनाई आते ही लोग अपने इष्टदेव को दंडवत प्रणाम करते हैं और प्रार्थना करते हैं। इस तरह थोड़ी-सी भी कठिनाई आए, थोड़ा-सा भी नुकसान हो या थोड़ी-सी भी पीड़ा आए, तो लोग स्वयं को कुछ भी न कर सकने वाला और शक्तिहीन समझकर प्रार्थना करने लगते हैं। इस तरह वे हमेशा अपने आपको कुछ भी न कर सकने वाला और अल्प ही मानते रहते हैं।

लेकिन आप ये सब करते-करते और भी अधिक अल्प होते जा रहे हैं, और भी अधिक हीन होते जा रहे हैं तथा कुछ भी न कर सकने की स्थिति में पहुँचते जा रहे हैं। कर सकने में समर्थ होते हुए भी, हासिल कर सकने में समर्थ होते हुए भी और प्राप्त कर सकने में समर्थ होते हुए भी, आप कुछ भी न कर पाने वाले बनते जा रहे हैं।

शास्त्रों में ''या मतिः सा गतिः भवेत'' है।

यानी आपकी मति के अनुसार ही आपकी गति होगी। अर्थात उस प्रकार की भावना के कारण आप और भी अधिक कमजोर होते जा रहे हैं। क्योंकि आप आत्मस्वरूप होते हुए, अर्थात दिव्यस्वरूप होते हुए भी, मानो आप कुछ भी नहीं हैं। आप स्वयं का अपमान कर रहे हैं और भी अधिक गिरते जा रहे हैं।

आप ही ईश्वर हैं, इसका अर्थ है कि आप कितने महान हैं। इतने महान होते हुए भी, आप इस शरीर को ही मैं मानते हुए, स्वयं को केवल एक मनुष्य समझते हुए, मैं कुछ नहीं कर सकता और मैं इन कठिनाइयों को दूर नहीं कर सकता ऐसा सोचते हुए, स्वयं का अपमान करते हुए कठिनाइयों में धँसते जा रहे हैं।

क्योंकि यदि आप अपने आपको कमतर समझते हैं, तो अपनी ही आत्मा का अपमान करने के समान ही है। अर्थात एक तरह से आत्मा का अपमान करना, अर्थात भगवान का अपमान करने के समान ही है। महान और अनंत शक्तिस्वरूप भगवान को अपमान करने के समान ही माना जाएगा।

इसलिए आत्मा का कभी भी अपमान नहीं करना चाहिए। याद रखिए, आत्मा साधारण नहीं है। जिस भगवान ने सृष्टि की रचना की है, जो सृष्टि का आधार है और जो सृष्टि को चला रहे हैं, वही आत्मा है। ऐसी महान आत्मा का अपमान करें, तो वह भगवान का अपमान करने के समान ही है।

श्लो।। उद्धरेदात्मनाऽत्मानं नात्मानमवसादयेत।

आत्मैव ह्यात्मनो बन्धुरात्मैव रिपुरात्मनः।।(भ.गी.6-7)

ता:- स्वयं अपना उद्धार करना चाहिए। लेकिन हीन कार्य करके आत्मा का अपमान नहीं करना चाहिए। यदि इस तरह आत्मा का अपमान करोगे, तो वही आत्मा शत्रु बनकर तुम्हारा अपकार करेगी। ऐसा न करके आत्मा को उन्नत मानकर उसका अपमान नहीं करोगे, तो वही आत्मा मित्र बनकर तुम्हारा उपकार करती है।

इसलिए आपको स्वयं अपना अपमान नहीं करना चाहिए, अल्प नहीं मानना चाहिए, शरीर में मौजूद आत्मशक्ति को बाहर लाना चाहिए। ऐसा कुछ भी नहीं होगा जिसे आप हासिल न कर सकें, आप कुछ भी कर सकते हैं और किसी भी परिस्थिति से बाहर निकल सकते हैं।

आप अपनी कठिनाइयों से, अपनी पीड़ाओं से, अपनी समस्याओं से – इन सब से बाहर निकल सकते हैं। वास्तव में आप अपने दुःखों को स्थायी रूप से दूर कर सकते हैं, क्योंकि आपका उद्धार कोई और नहीं कर सकता।

आम तौर पर दुनिया में लोग मंदिरों की ओर जाते हैं, चर्चों की ओर जाते हैं, मस्जिदों की ओर जाते हैं। फिर गुरुओं के पास जाते हैं, आश्रमों में जाते हैं, उनके चरणों में गिरते हैं, इनके चरणों में गिरते हैं और अपने उद्धार के लिए प्रार्थना करते रहते हैं। लेकिन यह जान लेना चाहिए कि आपका उद्धार कोई और नहीं कर सकता। आपको अपना उद्धार स्वयं ही करना होगा।

लोग सोचते हैं कि कोई ऊपर के लोकों से आएगा, उनकी कुछ सहायता करेगा और उनका उद्धार कर देगा। लेकिन ऐसा नहीं है। आपको अपना उद्धार स्वयं ही करना होगा, यही बात पत्री जी हमेशा कहा करते थे। बहुत से लोग मेरे पास यह सोचकर आते हैं कि मैं कुछ करूँगा। लेकिन मैं क्या कर सकता हूँ ? मैं केवल मार्ग दिखाता हूँ, मार्ग बताता हूँ। लेकिन मैं कुछ भी नहीं कर सकता, और न ही मैं कुछ करता हूँ। पत्री जी स्पष्ट रूप से कहते हैं कि हर व्यक्ति को अपना उद्धार स्वयं करना चाहिए। बहुत से लोग मेरे पास इस तरह आते हैं, लेकिन कोई किसी दूसरे का उद्धार नहीं

कर सकता, हर व्यक्ति को अपना उद्धार स्वयं ही करना चाहिए। यही बात पत्री जी बहुत स्पष्ट रूप से कहते रहते हैं।

इस बात को समझे बिना लोग सोचते हैं कि बस कोई–सा ध्यान करें तो ऊपर के लोकों से कोई आएगा, इन नक्षत्र लोकों से कोई आएगा, मास्टर्स आएँगे, हमारा मार्गदर्शन करेंगे और हमारी सहायता करेंगे। लेकिन यह जानना चाहिए कि कोई किसी के लिए कुछ भी नहीं कर सकता।

पत्री जी जैसे महान व्यक्ति भी स्पष्ट रूप से कहते हैं कि कोई किसी का उद्धार नहीं कर सकता। हर व्यक्ति को अपना उद्धार स्वयं ही करना चाहिए।वे कहते हैं, मैं जो कहता हूँ, यदि आप वही करेंगे तो आपको लाभ होगा। आराम से बैठिए, ''श्वास पर ध्यान'' रखकर ध्यान कीजिए। बाकी सब कुछ आपको अपने आप, स्वाभाविक रूप से प्राप्त हो जाएगा।

श्रीकृष्ण भगवान का संदेश यह है कि ''आत्मानाम अवसादयेत'' का अर्थ है अपनी आत्मा अर्थात स्वयं का अपना अपमान मत करो और स्वयं को कम मत समझो। जैसे ही आप स्वयं को तुच्छ समझना शुरू करते हैं, उसी क्षण से अनजाने में ''आत्मैव रिपुरात्मनः'' अर्थात आपकी अपनी ही आत्मा आपके लिए शत्रु बन जाती है, ऐसा उन्होंने बताया। इसलिए अपना अपमान न करें, जब आप पत्री जी द्वारा हम सभी को दी गई ''श्वास पर ध्यान'' की साधना के माध्यम से स्वयं अपना उद्धार करने का प्रयास करते हैं, तब ''आत्मैव बन्धुः'' अर्थात आपकी अपनी ही आत्मा आपकी मित्र बन जाती है और वह आपका बहुत उपकार करती है।

श्रीकृष्ण भगवान का संदेश यह है कि यदि आप स्वयं को कमतर समझते हुए, स्वयं को अल्प मानते हुए, अपने ऊपर से विश्वास खो देते हैं और स्वयं से ही द्वेष करना शुरू कर देते हैं, तो ''आत्मैव रिपुरात्मनः'' अर्थात आपकी अपनी ही आत्मा आपके लिए शत्रु बनकर अपकार करती है।

इसीलिए पत्रीजी कहते हैं कि सभी आत्मस्वरूप हैं, इसलिए सभी भगवान ही हैं, इसलिए सभी शक्ति के स्वरूप हैं। इसलिए किसी दूसरे के चरणों को स्पर्श नहीं करना चाहिए और पादाभिवंदन भी नहीं करना चाहिए। ऐसा करके अपना अपमान मत करो और अपने आपको छोटा मत समझो। वे हमें हमेशा यही समझाते रहते हैं।

इसलिए पत्री जी कहते हैं, मेरे चरणों में मत गिरो। मैं जितना हूँ, तुम भी उतने ही हो। इसलिए हाथ मिलाइए (शेक हैंड करो)।

अर्थात अल्प भावना को छोड़कर अपने आप को उस पवित्र, उन्नत, श्रेष्ठ, उदार और महान स्थिति तक पहुँचाओ – ऐसा श्रीकृष्ण भगवान ने कहा।

इसका अर्थ है कि श्रीकृष्ण भगवान ने कहा, अपनी निम्न प्रवृत्तियों, अल्प मानसिकताओं और तुच्छ प्रवृत्तियों को छोड़कर उन्नत स्तर तक पहुँचो। इसलिए इस श्लोक को बहुत अच्छी तरह समझना चाहिए। जितनी अच्छी तरह इसे समझेंगे, उतनी ही अच्छी तरह इसका आचरण करेंगे।

इसलिए आप देखिए, ''हिंदू'' शब्द का अर्थ भी यही है। कहा जाता है कि 'हिंदू' का अर्थ है ''हीनं नाशयति इति हिंदू।'' हीनम का अर्थ

है निम्न स्तर, और नाशयति का अर्थ है नाश करना। अर्थात जो अपने निम्न स्तर का नाश करके उन्नत स्तर तक उठता है, वही हिंदू है।

अर्थात जो अल्प अवस्था में जन्म लेकर उन्नत, महान और दैवीय स्थिति तक पहुँचता है, वही हिंदू है। यही उसका अर्थ है। अगर तुम हिंदू के रूप में जन्मे हो, तो तुम्हें उन्नत व्यक्ति बनना चाहिए। इसका अर्थ है कि भगवद्गीता, उपनिषदों और वेदों में निहित सार को ग्रहण करके उसके अनुसार परिश्रम करके उन्नत स्तर तक उठो।

इसलिए उच्च स्तर और नीच स्तर हैं। इसी प्रकार उच्च आत्मा और निम्न आत्मा भी हैं। निम्न स्तर से संबंधित जीवात्मा का अर्थ है कि वह सोचता है, मैं मनुष्य हूँ, मैं अल्प हूँ। श्रीकृष्ण भगवान कहते हैं कि इस निम्न स्तर की जीवात्मा से उच्च आत्मा अर्थात परमात्मा की स्तर तक प्रगति करनी चाहिए।

हीन भावना छोड़नी चाहिए। आपके मन में जो हीन भावना है, अर्थात मैं छोटा हूँ, मैं अल्प हूँ ऐसी भावना दूर होनी चाहिए। वह कैसे दूर होगी ? अर्थात ध्यान के माध्यम से। जब भी आप अपने आपको मनुष्य या केवल शरीर मानते हैं, तब आप स्वयं को अल्प ही मानते हैं। जब आप इस सृष्टि के सत्य को जान लेते हैं, तब आपको यह समझ में आता है कि आप आत्मा हैं, शरीर नहीं। और जैसे ही आपको आत्मा की महानता का पता चलता है, तब आपको यह समझ में आता है कि मैं भी महान हूँ।

यदि उस स्थिति तक पहुँचना है, तो ''श्वास पर ध्यान'' रखते हुए ध्यान-साधना करनी चाहिए। यदि आप इसे समझ लेते हैं, तो आप जीवन में सफल हो गए समझिए। और यदि यह बात समझ में नहीं आती, तो

नुकसान आपका ही होंगे।

यदि आप देह–स्थिति और मन:स्थिति में रहते हैं, तो अल्प भावना में ही रहते हैं। आखिरकार बुद्धि–स्थिति तक पहुँच जाने पर भी फिर भी अल्प भावना में ही रहते हैं। उस बुद्धि की स्थिति को पार कर लेने पर, आपकी अल्प भावना चली जाएगी। इसीलिए ध्यान में तीन स्थितियाँ बताई गई है। पहली स्थिति में चंचल मन निश्चल हो जाता है। उस निश्चल स्थिति में यदि आप लगातार दो महीने तक ध्यान करें, तो वह निश्चल मन निर्मल हो जाता है, अर्थात पवित्र हो जाता है, यानी शुद्ध हो जाता है। इसे दूसरा स्टेज कहते हैं।

ऐसा निर्मल मन यदि कुछ और वर्षों तक तीव्र साधना करता रहे और आहार के नियमों का पालन करता रहे, तो मन शून्य हो जाता है। वहाँ आपको दैवीय लक्षण, दैवीय भावनाएँ और दैवीय स्थिति प्राप्त आती है। तब आपको महान समझा जाएगा।

याद रखिए अनुभव प्रधान नहीं हैं। जब आपके मन से स्त्रहम अल्प हैंस्त्र यह भावना चली जाती है, तब आपसे महान कोई नहीं होता।

यही बात पत्री जी कहते हैं कि हर व्यक्ति को अपना उद्धार स्वयं करना चाहिए। जैसे–जैसे आप उन्नत स्थिति की ओर बढ़ते जाते हैं, वैसे–वैसे निम्न स्तर की सभी भावनाएँ समाप्त होती जाती हैं। तब निम्न स्तर की समस्याएँ और कष्ट भी दूर होते जाते हैं।

और देखिए "कोविड के समय" भी जब कोई बाहर नहीं निकल रहा था, तब मैं पी.एम.सी. के लिए महीने में 15 दिन पूरे दो राज्यों में घूमा। मैंने मास्क नहीं पहना, सबके साथ हाथ मिलाया और मैं सबमें घुल–मिल

गया। फिर क्या हुआ? कुछ भी नहीं हुआ। जो कार्य मैंने ठाना था, वह सफल हो गया।

मेरे जीवन में शुरू से ही उसी भावना में रहने के कारण मैं इस स्तर तक पहुँच पाया हूँ। हर व्यक्ति से यही कहता हूँ "अल्प भाव को छोड़िए और उन्नत भावना के साथ रहिए।" आप आत्मा हैं, आप ही भगवान हैं, आपसे बड़ा कोई नहीं है, आप महान हैं, इस भावना में रहिए कि आप सबके समान हैं। आप आगे बढ़ेंगे और सब कुछ पार कर जाएँगे।

अपने आपको हीन मत मानिए, अपने आपको अल्प मत मानिए, अपने आपको ऐसा मत मानिए कि आप कुछ भी नहीं कर सकते। इस भावना में रहिए कि आप कुछ भी हासिल कर सकते हैं। आप सब कुछ कर सकते हैं, सब कुछ हासिल कर सकते हैं। बस थोड़ा-सा अपने अंतर में जाइए। अंतर में जाईए अर्थात श्वास को ही पकड़ना चाहिए।

इसलिए याद रखिए। आप एक अद्भुत मार्ग पर आ गए हैं। इसलिए उसका उपयोग करके महान बनकर आगे बढ़ना चाहिए। आप चाहे जैसा भी सोचते हों, चाहे जैसी भी स्थिति में हों, आपको इस सत्य को जानना चाहिए। इस सत्य को इतनी बेबाकी से कोई नहीं कहेगा। लेकिन तुम ही भगवान हो, तुम ही महान हो यह बात पत्री जी ने ही कही है।

उसके लिए बहुत से लोग सोचते हैं कि उन्हें अनेक जन्म लेने पड़ेंगे। लेकिन यदि आप हीन भावना छोड़कर उन्नत भावना में रहते हैं, तो इसी जन्म में बहुत महान बन जाएँगे। इसलिए यह मत कहिए कि वह मास्टर महान है या यह मास्टर महान है। आप क्यों नहीं? वरिष्ठ कौन है? वरिष्ठता वर्षों में नहीं, बल्कि ज्ञान में होनी चाहिए।

जिसके पास अधिक आत्मज्ञान होता है, वही वरिष्ठ होता है। मास्टर, अर्थात बुद्ध, यही कहते हैं कि धन में वृद्ध नहीं, बल्कि ज्ञान में वृद्ध बनना चाहिए।

इसलिए आपको उस ज्ञान को बढ़ाना चाहिए। इसीलिए मैं इसी विषय पर अधिक ध्यान केंद्रित करता हूँ। कुछ आए या न आए, इसकी चिंता मत कीजिए। अपना ध्यान इस बात पर रखिए कि आपका ज्ञान कितना बढ़ा है। ज्ञान बढ़ाइए। ज्ञान बढ़ाने का मार्ग ही पत्री जी ने हमें दिया है।

ध्यान साधना करना, ज्ञानवर्धक पुस्तकें अर्थात आत्मज्ञान से संबंधित पुस्तकें पढ़ना, आत्मज्ञान से संबंधित संदेशों को सुनना, तथा इस आत्ममार्ग में, इस ध्यानमार्ग में की जाने वाली सेवाएँ, इन चार बातों को पकड़िए। उन्हीं को पकड़कर हम इस स्तर तक पहुँचे हैं। इसलिए हीन भावना को छोड़ दीजिए। हर व्यक्ति श्वास पर ध्यान रखते हुए ध्यान कीजिए। आप भी उन्नत स्थिति तक पहुँच जाएँगे।

‘‘मन की शांति से जीना हो तो ?’’

देखिए, अभी आप शांति ही हैं। लेकिन किसी दिन घर में झगड़ा हो जाए, या मारपीट हो जाए, या पड़ोसियों से झगड़ा हो जाए, या कोई दुर्घटना हो जाए, तो आप अपनी मन की शांति खो देते हैं। अर्थात पहले आपने मन की शांति प्राप्त कर ली थी, लेकिन फिर उसे खो दिया। इसके बजाय, ‘‘जीवन भर मन की शांति से जीने के लिए क्या करना चाहिए ?’’ आइए जानें।

क्योंकि ‘‘कहना आसान है, लेकिन उसे आचरण में लाना बहुत कठिन है।’’ कहना तो कोई भी कह सकता है, ऐसे रहिए, वैसे रहिए, इस तरह व्यवहार कीजिए, उस तरह व्यवहार कीजिए। यह कहना बहुत आसान है। लेकिन उस प्रकार जीवन जी पाना कोई मामूली बात नहीं है।

बहुत से लोग कहते हैं, नकारात्मक मत सोचो। लेकिन ऐसा मत सोचो कहना बहुत आसान ही है। लालच मत करो, ऐसा कहते हैं, लेकिन लालच नहीं करना चाहिए, ऐसा कहा जाता है। ये सब बातें कहने में तो अच्छी लगती हैं। लेकिन उस प्रकार जीवन जीना बहुत-बहुत कठिन है। फिर उस प्रकार की स्थिति तक पहुँचने के लिए क्या करना चाहिए, यह भी जानना चाहिए।

इसलिए मैं किसी भी विषय में केवल ऐसा कीजिए, वैसा कीजिए कहने तक ही सीमित नहीं रहता। बल्कि इस बात पर अधिक ध्यान देने के लिए कहता हूँ कि आप उस प्रकार का आचरण कैसे कर सकें, उसके लिए क्या करना चाहिए और क्या करने से आप उस प्रकार का जीवन जी सकेंगे। लेकिन वह इतना आसान नहीं है।

ध्यान शुरू करते ही, अर्थात आँखें बंद करके बैठते ही, यदि सब कुछ एकदम से मिल जाता, तो हर कोई इस ध्यान में महान बन जाता। इसलिए यह इतना आसान नहीं है।

उसके अनुसार कुछ प्रयास करने पर ही धीरे-धीरे उस स्तर तक पहुँचा जा सकता है। वास्तव में आपको उसकी आवश्यकता है। जिस किसी का यह दृढ़ संकल्प हो कि ''मुझे उस स्थिति में जीना है'', यदि वह उसी प्रकार दृढ़ता के साथ निश्चित रूप से प्रयास करे, तो वह उसे क्यों नहीं हासिल कर सकता? जब बड़े-बड़े लोगों ने उसे हासिल किया है, तो आप उसे क्यों नहीं हासिल कर सकते?

अब सबसे पहले ''मन की शांति से जीना चाहिए।'' अर्थात यदि आप ध्यान करेंगे तो मन की शांति अपने आप आ जाएगी। वह कोई बड़ी बात नहीं है। लेकिन फिर कोई दूसरी घटना घट जाए, तो आप उस शांति को फिर से खो देते रहते हैं। इस सांसारिक जीवन में, इस गृहस्थ जीवन में कुछ-न-कुछ घटनाएँ होती ही रहती हैं। कुछ-न-कुछ हुए बिना नहीं रहता, ऐसा होना असंभव है। हर किसी के जीवन में ऐसा ही होता है।

यदि आप इस गृहस्थ जीवन को छोड़कर कहीं और चले जाएँ, तो वह अलग बात है। लेकिन आप तो गृहस्थ जीवन में ही हैं। आपने गृहस्थ जीवन में रहते हुए ही इस आध्यात्मिक मार्ग में प्रवेश किया है। इसलिए इसी गृहस्थ जीवन में रहते हुए, धन कमाते हुए, परिवार का पालन-पोषण करते हुए, सांसारिक सुखों का अनुभव करते हुए और अपनी पारिवारिक जिम्मेदारियों का निर्वाह करते हुए भी, इस आध्यात्मिक मार्ग में आगे बढ़ने का प्रयास करना चाहिए।

यही बात पिताजी कह रहे हैं। आपको कहीं हिमालय, जंगलों या आश्रमों में जाने की आवश्यकता नहीं है। अपने घर में रहते हुए, अपना गृहस्थ जीवन जीते हुए, इन्हें प्राप्त करने का प्रयास कीजिए यही कहा जा रहा है। वास्तव में, यह व्यावहारिक रूप से भी संभव है। क्योंकि यदि कहा जाए कि इस गृहस्थ जीवन को छोड़कर चले जाओ, तो कौन जा सकता है ? कौन जाएगा ? इसलिए वह संभव नहीं हो पाता है।

इसीलिए पत्री जी कहते थे, तुम गृहस्थ जीवन जीते हुए भी अपना कुछ समय इसके लिए निकालकर इसे प्राप्त करने का प्रयास करो। यही तो आप सब अभी कर रहे हैं और इसी तरह धीरे-धीरे आगे बढ़ रहे हैं। आप एक ही बार में उनकी तरह नहीं बढ़ पाएँगे, लेकिन धीरे-धीरे ज़रूर आगे बढ़ेंगे। इसमें भी जो लोग थोड़ा अधिक परिश्रम करते हैं और अधिक ध्यान देते हैं, वे निश्चित रूप से थोड़ा जल्दी आगे बढ़ते रहते हैं।

कुछ लोगों को अवसर मिलते हैं, और कुछ लोगों को नहीं मिलते। हर किसी की अलग-अलग तरह की समस्याएँ होती हैं, कुछ लोगों को आर्थिक समस्याएँ होती हैं, कुछ लोगों को स्वास्थ्य संबंधी समस्याएँ होती हैं, और कुछ लोगों पर गृहस्थ जीवन की ज़िम्मेदारियाँ होती हैं। बहुत से लोगों को भुक्ति अर्थात धन कमाने के लिए ज़्यादा समय देना पड़ता है।

बहुत से लोगों को तो चौबीसों घंटे मेहनत करने पर ही गृहस्थ जीवन चल पाता है। इसलिए उन्हें अपना सारा समय उसी में लगाना पड़ता है। उसमें समय लगाते हुए भी, कुछ समय इसके लिए निकालना चाहिए, यह कोई मामूली बात नहीं है। कहना तो आसान है, लेकिन उस तरह की

स्थिति को प्राप्त करना बहुत–बहुत कठिन है, आजकल फुर्सत किसे मिलती है ?

स्वाभाविक रूप से कुछ लोगों को अवसर मिलता है। अब देखिए, कुछ लोगों के पास पर्याप्त धन होता है, बच्चों की ज़िम्मेदारियाँ भी पूरी हो जाती हैं। फिर उन्हें और क्या काम होता है ? वे इस पर पूरा ध्यान लगा सकते हैं। यदि वे इस पर ध्यान नहीं लगा पाते, तो समझना चाहिए कि वे अभी उस स्तर तक नहीं पहुँचे हैं। इसलिए पत्री जी यह नहीं कहते कि गलती किसकी है।

अगर इस जन्म में नहीं करोगे, तो अगला जन्म लोगे। तब भी वही काम करोगे। फिर किस बात की चिंता ? क्यों चिंता करते हो ? लेकिन विवेकवान और बुद्धिमान व्यक्ति इस कीचड़ से जितनी जल्दी हो सके बाहर निकलने की कोशिश करता है।

मुझे ये दुख नहीं चाहिए, ये समस्याएँ नहीं चाहिए, ये झगड़े नहीं चाहिए। ये सब मुझे क्यों चाहिए ? जो व्यक्ति सोचता है कि ४६मुझे किसी भी तरह इन सबसे बाहर निकलना है, तब उनके भीतर किसी न किसी तरह इससे बाहर निकलने अर्थात, मुक्ति प्राप्त करने अर्थात मोक्ष पाने की तीव्र आकांक्षा उसमें जाग उठती है, ऐसे व्यक्ति को ही ''मुमुक्षु'' कहा जाता है।

ऐसे लोगों को थोड़ा ज़्यादा ध्यान देना पड़ता है। अगर वे ऐसा करें, तो उसे हासिल कर सकते हैं। वे हासिल किए बिना नहीं रहता, किया हुआ प्रयास कभी व्यर्थ नहीं जाता। आप जो भी करें, चाहे जितना भी मेहनत करें, उसका फल होता है। आप जब सही मार्ग पर, सही तरीके से प्रयास करते हैं, तब उसका फल प्राप्त करते हैं।

इसलिए यदि जीवन भर मन की शांति के साथ जीना है, तो कुछ बातों को जानना चाहिए।

1. वर्तमान में जी सकना चाहिए।

2. दूसरों के दोष नहीं देखने चाहिए, बल्कि अपनी अंदर के दोषों को सुधारना चाहिए।

3. बुद्ध का अष्टांग मार्ग मानसिक शांति और मुक्ति के लिए अच्छा मार्ग है।

4. दूसरे क्या सोचेंगे, ऐसा सोचने वाले को, जीने वाले को मन की शांति नहीं होती। जो व्यक्ति स्वतंत्र रूप से जीता है, उसे मन की शांति होती है।

5. अत्यधिक मोह और ममत्व मन की शांति को छीन लेते हैं।

6. जितना कम प्रेम करोगे, उतनी मन की शांति।

7. फल की अपेक्षा से किए गए कर्म भी मन की शांति को छीन लेते हैं। इसलिए फल की अपेक्षा के बिना कर्म करने से मन की शांति प्राप्त होती है।

8. विचार व्यवस्थित हों तो शांति, और अव्यवस्थित हों तो अशांति होती है।

9. कोई भी काम करते समय पहले सोच-विचार करना चाहिए, नहीं तो अशांति होना तय है।

10. मन सात्त्विक गुण में हो तो शांति से रहता है।

11. मन की शांति चाहने वालों को आलस्य छोड़कर प्रतिदिन ध्यान साधना करनी चाहिए।

12. मन को अपने भीतर ही रखना चाहिए। अर्थात, ध्यान करते समय यदि मन विचारों में रहे, तो मन की शांति प्राप्त नहीं हो सकती।

13. मन की शांति प्राप्त करने के लिए, भगवद्गीता के दूसरे अध्याय के 56वें श्लोक में इस प्रकार कहा गया है। अर्थात जो व्यक्ति दुःख आने पर विचलित नहीं होता, सुख मिलने पर अति-उत्साहित नहीं होता, और जिसकी आसक्ति, भय तथा क्रोध दूर हो चुके हैं, उसे ''स्थितप्रज्ञ'' कहा जाता है।

ऐसा व्यक्ति मन की शांति से जी सकता है। इस प्रकार इन सभी बातों को ध्यान में रखकर उन्हें वास्तविक रूप में लाने का प्रयास करना चाहिए और आचरण में लाना चाहिए।

1. वर्तमान में जी सकना चाहिए :

अर्थात न अतीत में जाना चाहिए, न भविष्य में जाना चाहिए। वर्तमान में रहना चाहिए। स्वाभाविक रूप से, जब मन थोड़ा खाली हो, तो वह या तो अतीत के बारे में सोचता है या फिर भविष्य के बारे में सोचने लगता है, मन का और कोई काम नहीं है, सोचना ही उसका काम है।

मन निरंतर किसी न किसी बात का चिंतन करता ही रहता है। एक प्रकार से यदि आप सोचें कि आपको नहीं सोचना चाहिए, तो भी यह संभव नहीं है। वह ऐसे ही कुछ-न-कुछ सोचता ही रहता है। उसका कोई अंत नहीं होता। अंदर कितने विचार होते हैं, उनका भी कोई अंत नहीं है। एक के बाद एक, एक के बाद एक, इस तरह आते ही रहती हैं। स्वाभाविक रूप से आपके साथ अच्छी हुई घटनाएँ होती हैं और आनंद देने वाली घटनाएँ भी होती हैं। अगर वे याद आ जाएँ तो कोई बात नहीं, कोई परेशानी नहीं होगी।

लेकिन जो बातें दुःख पहुँचाती हैं, वही बार-बार याद आती रहती हैं। कभी कोई समस्याएँ, कभी झगड़े, कभी मारपीट, कभी आर्थिक परेशानियाँ, और अगर ये न हों तो कोई न कोई दूसरी समस्या, इस तरह तरह-तरह की होती रहती हैं। पारिवारिक झगड़े, पारिवारिक कलह, या पड़ोसियों से आने वाली परेशानियाँ, इस तरह की समस्याएँ एक नहीं, बल्कि बहुत-सी होती हैं।

इसी प्रकार कुछ लोगों को राजनीति से जुड़ी समस्याएँ होती हैं, और वे बार-बार याद आती रहती हैं। स्वाभाविक रूप से, जब ऐसी घटनाएँ होती हैं, तो वे दुःखी हो जाते हैं। ऐसा क्यों हुआ? यही सोचकर वे बहुत अधिक अशांति के शिकार हो जाते हैं।

लेकिन उस घटना को हुए तीन महीने बीत जाने के बाद भी वास्तव में कुछ नहीं होता, फिर भी जब वह घटना याद आती है, तो वे उतना ही दुःखी हो जाते हैं, मानो वह अभी-अभी हुई हो। विचित्र बात यह है कि वह घटना एक बार याद आए तो एक बार दुःखी हो जाते हैं, दस बार याद आए तो दस बार दुःखी हो जाते हैं, और सौ बार याद आए तो सौ बार दुःखी हो जाते हैं। घटना तो केवल एक ही बार हुई थी, लेकिन वे ऐसे दुःखी हो जाते हैं मानो वह सौ बार हुई हो। देखिए, कितना दुर्भाग्य है कि घटना को एक साल बीत जाने के बाद भी लोग उसी को याद करते रहते हैं।

देखिए कुछ लोगों का पति चला जाता है, कुछ लोगों की पत्नी चली जाती है, और वे उन्हें कभी भूल नहीं पाते। किसी का इकलौता बेटा दुर्घटना में चला गया हो, तो वे उसे कभी भूल नहीं पाते। अब इस संपत्ति का क्या फायदा? अब मैं क्यों मेहनत करूँ? मैं क्यों कमाऊँ? इस सबका

क्या करूँ ? ऐसे भाव में रहते हैं और इसी तरह दुखी होते रहते हैं।

इसी तरह कुछ लोग चुनावों में हार जाते हैं। अगर वे हार जाते हैं, तो उसे भी भूल नहीं पाते। मैंने कहाँ गलती की ? इतना खर्च तो किया ? इतना खर्च करने पर भी मैं क्यों हार गया ? क्या उसने धोखा दिया ? क्या इसने धोखा दिया ? उसी की वजह से मेरी ऐसी स्थिति हुई। इस तरह वे तरह–तरह की बातें सोचते रहते हैं।

असल मैं इस चुनाव में उतरा ही न होता, तो अच्छा होता। बेवजह चुनाव लड़ा, ऐसा सोचते हुए वे उसी बात के बारे में बार–बार सोचते रहते हैं। बार–बार उसी बात को याद करते रहते हैं। इस तरह जब भी मन खाली रहता है, तो उसी बात को बार–बार याद करते रहने के कारण मन की शांति नहीं रहती।

कुछ लोग भविष्य से संबंधित बाते सोचते करते हैं। बेटी अभी–अभी पैदा हुई है, फिर भी वे अभी से उसके बारे में सोचने लगते हैं। इसकी शादी कैसे करूँ ? शादी करने के लिए क्या करना पड़ेगा ? इसके लिए फिर कितना पैसा कमाना पड़ेगा ? इसी तरह जब शादियाँ होती रहती हैं, तो वे दूसरों के खर्चे और इनके खर्चे देखते रहते हैं। शादी हो तो ऐसे बहुत से खर्चे होते हैं न, ' ऐसा सोचकर लोग बहुत बाद में होने वाली शादी के बारे में भी अभी से सोचने लगते हैं।

इसी तरह कुछ लोग परीक्षा देने के बाद बार सोचते रहते हैं, मैं पास होऊँगा या नहीं ? पहला स्थान आएगा या नहीं ? मैंने इतनी मेहनत की है, कहीं मेरी सारी मेहनत व्यर्थ न चली जाए। इसी चिंता से वे दु:खी रहते हैं। और परिणाम आने तक वे इसी परिस्थिति में रहते हैं। वास्तव में, जब परिणाम आ जाएँ, उसके बाद दु:खी हो सकते हैं या अशांति का शिकार हो

सकते हैं।

लेकिन अभी परिणाम आने में दो महीने का समय है। अभी से ऐसा सोचना बहुत अजीब लगता है। जीवन में कुछ लोग अतीत के बारे में सोचते हैं, और कुछ लोग भविष्य के बारे में सोचते हैं। ऐसा सोचते हुए वे केवल बहुत दुःखी ही नहीं होते, बल्कि तीव्र अशांति का भी शिकार हो जाते हैं।

देखिए, जब कोई मर जाता है, तो पीछे रह गए लोग बहुत दुःखी हो जाते हैं और उनके मन में शांति नहीं रहती। वास्तव में वे बहुत कुछ कर सकते हैं और बहुत कुछ हासिल कर सकते हैं। उन्हें बहुत–से काम करने होते हैं और बहुत कुछ हासिल करना होता है। लेकिन वे कहते हैं, मैं कुछ नहीं करूँगा, यह मुझसे नहीं होगा, मेरा कुछ भी करने का मन नहीं है। इसका कारण अतीत में चले जाना है। लेकिन यदि वे वर्तमान में रहते हैं, तो वह बात याद नहीं आती और वे आराम से, शांति के साथ रहते हैं। वे अपना काम करते हुए सामान्य रूप से जीवन जीते हैं।

इसलिए यदि आप हमेशा वर्तमान में रह सकें, अर्थात अभी के क्षण में रह सकें, तो मन की शांति प्राप्त कर सकते हैं। आख़िर अतीत में जाने वाला कौन है ? भविष्य में जाने वाला कौन है ? अर्थात मन ही है। यह मन कभी इधर जाता है, कभी उधर जाता है। कभी उस घटना में चला जाता है, तो कभी इस घटना में चला जाता है। जाकर आपको इतने तरह से परेशान करता है।

इसलिए ऐसे मन को वर्तमान में रखना चाहिए ।लेकिन वास्तव में यह मन कहाँ है ? इसे वर्तमान में कैसे रखें ? यदि इसका कोई आकार होता, तो इसे रख सकते थे।

देखिए, इस शरीर को रखना हो तो रख सकते हैं। इस सोफ़े पर, इस कुर्सी पर या इस बिस्तर पर रख सकते हैं। मन को वर्तमान में रखना हो, तो उसका केवल एक ही मार्ग है। वही है पत्रीजी द्वारा हमें दिया गया ''श्वास पर ध्यान'' ध्यान।

केवल ''श्वास पर ध्यान'' के माध्यम से ही आप मन को अतीत में जाने से और भविष्य में जाने से रोककर उसे निश्चल अवस्था में रख सकते हैं तथा वर्तमान में रख सकते हैं। आप जब भी ध्यान में बैठें और पाँच मिनट में ही सारे विचार रुक जाएँ, मन अतीत में न जाए, भविष्य में न जाए, और आप उसे निश्चल अवस्था में रख सकें, तो निश्चित रूप से समझिए कि आपको अपने मन पर नियंत्रण प्राप्त हो गया है। आप वर्तमान में जी रहे हैं।

तब आप सामान्य जीवन में भी अतीत के बारे में नहीं सोचेंगे, अतीत में नहीं जाएंगे और भविष्य में भी नहीं जाएंगे। आप जो भी काम कर रहे हैं, उसी पर अपना ध्यान रखते हैं। तब आप शांति से रहेंगे। आप अपने सभी काम अच्छी तरह करते हैं, उन्हें पूरी तरह सही और बिल्कुल ठीक ढंग से करते हैं। आप जीवन में बहुत सफल होंगे।

इसलिए आप किसी भी क्षेत्र में हों, किसी भी प्रोफ़ेशन में हों। आप डॉक्टर हो सकते हैं, अभिनेता हो सकते हैं, या किसी भी अन्य पेशे में हो सकते हैं। आप पेंटर, राजमिस्त्री, मैकेनिक या कोई भी हो सकते हैं। यदि आपका ध्यान केवल अपने काम पर रहेगा, तो वह काम पूरी तरह सफल होगा।

या फिर आप पढ़ाई कर सकते हैं। आपके सामने एक किताब होगी और आप पढ़ रहे होंगे, लेकिन किसी और बात के बारे में सोच रहे

होंगे। इससे क्या फायदा? देखने में तो लगेगा कि आप पढ़ रहे हैं, लेकिन मन कहीं और चला जाता है, इसलिए जो पढ़ते हैं, वह दिमाग़ में नहीं चढ़ता। यदि वर्तमान में जीना है, तो ''श्वास पर ध्यान'' रखना चाहिए। इस तरह आँखें बंद करके ''श्वास पर ध्यान'' रखने से और विचार आने पर उन्हें रोकते रहने से, विचारों की तीव्रता कम हो जाती है। इतना ही नहीं, विचारों का प्रभाव भी कम हो जाता है। इस तरह काटते-काटते सारे विचार समाप्त हो जाते हैं और उनका प्रभाव भी पूरी तरह खत्म हो जाता है।

अर्थात जब आप खाली बैठे होते हैं, तब वे बातें अपने-आप याद नहीं आतीं। आप चाहें तो उन्हें याद करना होगा, लेकिन वे अपने-आप याद नहीं आएँगी। इस तरह यदि सारे विचारों को खाली कर दें, तो फिर अशांति कहाँ रहेगी? ''बस शांति ही शांति होगी।''

इसीलिए हम आपको भीमवरम आने के लिए कहते हैं, क्योंकि आप हर बात के लिए तैयार होकर आते हैं। हम आपको तीन दिनों तक बैठाएँगे। स्वाभाविक रूप से आप अपने घर पर इस तरह नहीं बैठते। किसी न किसी काम या किसी न किसी भागदौड़ के कारण आप उठकर चले जाते रहते हैं। लेकिन भीमवरम में आप तैयार होकर आए हैं, इसलिए तीन दिनों तक बैठे रहते हैं। इस तरह मन में होने वाली बातें पहले ही दिन पूरी तरह खाली हो जाती हैं। दूसरे दिन से आप अच्छी तरह बैठते हैं। अगर इस तरह कड़ी मेहनत करेंगे, तो क्यों नहीं हासिल कर पाएँगे? अगर सोच लें, तो कुछ भी हासिल कर सकते हैं। इसलिए इन तीन दिनों तक कक्षा में अच्छी तरह अभ्यास करने से मन को हमेशा वर्तमान में रखने की आदत पड़ जाती है। उसकी वजह से आप शांति से जीवन जीते रहते हैं, और जीवन में शांति प्राप्त करते हैं।

इसलिए यदि वर्तमान में जीना है, तो निश्चित रूप से ध्यान करना चाहिए, ध्यान में निश्चल अवस्था प्राप्त करनी चाहिए। आप आँखें बंद करके बैठें, तो पाँच मिनट के भीतर ही उस अवस्था में पहुँच जाना चाहिए।

2. दूसरों के दोष नहीं देखने चाहिए, बल्कि अपने अंदर के दोषों को सुधारना चाहिए।

सामान्यतः दुनिया में प्रचलित आदत क्या है ? लोग कितनी भी देर तक अपने बारे में नहीं सोचते, अपने अंदर की बुराइयों को नहीं देखते, बल्कि दूसरों पर ही ध्यान देते रहते हैं। क्योंकि देखिए, जब दो लोग बैठते हैं, तो वे तीसरे व्यक्ति के बारे में बात करते हैं, जब तीन लोग बैठते हैं, तो वे चौथे व्यक्ति के बारे में बात करते हैं।

दूसरों का ज़िक्र किए बिना बात नहीं करते। यदि आप सचमुच किसी तीसरे व्यक्ति का ज़िक्र किए बिना आपस में बातचीत कर सकते हैं, तो समझिए कि आप महान स्थिति में हैं।

इसी बात को पत्री जी कहते हैं। किसी तीसरे व्यक्ति से आपको क्या लेना-देना ? दूसरों के झगड़ों से आपको क्या लेना-देना ? आप अपना झगड़ा खुद देखिए, वे यही कहते रहते हैं। आपको उससे क्या ? सचमुच उसमें दोष हैं, गलतियाँ हैं, वह गलत काम कर रहा है, तो अपने किए का फल वही भुगतेगा।

आप तो अनुभव नहीं करेंगे, ना! नुकसान तो उसी का ही होगा। अगर चाहो तो एक बार कह दो, अगर वह नहीं सुने तो तुम क्या करोगे ? जब वह वहाँ नहीं है, तो उसके बारे में सोचोगे तो तुम्हें क्या फायदा होगा ? चलो जब वह यहाँ नहीं है, तो उसके बारे में तुम सोचोगे तो क्या वह छोड़ देगा ? क्या वह बदल जाएगा ? क्या वह बदल लेगा ? आप उसके बारे में

क्यों बात कर रहे हैं ? पत्रीजी कहते हैं।

और अगर आपको कुछ करना ही है, तो उसके दोषों को देखना नहीं है, उन्हें गिनना नहीं है और उनके बारे में चर्चा भी नहीं करनी है। अपने अंदर जो भी दोष हैं, उनके बारे में सोचिए। उन्हें सुधारने की कोशिश करो, तब तुम्हारा जीवन अच्छा होगा।

अगर तुम्हें किसी की कोई गलती लगे, तो उसके बारे में किसी तीसरे व्यक्ति से चर्चा करने की ज़रूरत नहीं है। वह गलती तुम्हें उसमें दिखाई दी। जब तुम्हें ऐसी गलती दिखाई दे, तो तुम्हें बस इतना करना है कि वैसी गलती खुद न करें।

इसी तरह, आपसे भी महान कोई है; उसके बारे में भी ज़्यादा बात करने की कोई आवश्यकता नहीं है। आपको उस स्तर तक आगे बढ़ने और ऐसे ही अच्छे काम करने का प्रयास करना चाहिए।

यही बात पत्री जी कहते हैं। ‘‘एनलाइटनमेंट का मतलब क्या है ?’’ नाम से एक पुस्तक लिखी है। उसे पढ़ने पर यह पता चलता है कि दिव्य ज्ञान से प्रकाशित हुए लोगों की अवस्था कैसी होती है। वे हर किसी से सीखते हैं। गलती करने वाले व्यक्ति से भी सीखते हैं, यानी ऐसी गलतियाँ नहीं करनी चाहिए। मैं अच्छे काम करने वाले व्यक्ति से यह सीखते हैं कि मैं भी ऐसे ही अच्छे काम करूँ। उसी को महान व्यक्ति की अवस्था कहते हैं।

इसलिए दूसरों के दोष नहीं देखने चाहिए। अपने अंदर के दोषों को सुधारने का प्रयास करना चाहिए। यह कैसे संभव होगा ? यह केवल ‘‘श्वास पर ध्यान’’ के अभ्यास की वजह से ही संभव होता है। क्योंकि ध्यान किसने लगाया ? मन ने ही लगाया, है न ! यह मन अपने ऊपर ध्यान

नहीं देता, बल्कि हमेशा दूसरों पर ही ध्यान देता है।

मन मलिन होने पर ही उसके बारे में, इसके बारे में कहने से वही उनके लिए एक तरह की तृप्ति होती है। उनके बारे में, इनके बारे में बातें करते हुए, एक तरह से यही मानते रहते हैं कि गलती उन्हीं की है और खुद को निर्दोष समझते रहते हैं। वह ऐसा मानता है मानो वही सही है, वही सबसे महान है, और अपनी गलतियों को नहीं देखता।

इस तरह का व्यवहार करने वाला मन अशुद्ध, अर्थात मलिन मन होता है। इसलिए उस मन को शुद्ध करना चाहिए। मन कैसे शुद्ध होता है ? इस बारे में हम कई संदर्भों में बात कर चुके हैं। हमने कहा था कि मन की शुद्धि दो बातों के माध्यम से होती है।

इसके लिए "श्वास पर ध्यान" केंद्रित करके प्रतिदिन चार-पाँच घंटे गंभीरता से ध्यान करना चाहिए। ऐसा कुछ महीनों तक निश्चित रूप से करना चाहिए, सात्त्विक शाकाहारी भोजन लेना चाहिए। ये दोनों मन की शुद्धि के मार्ग हैं। चाहे कोई भी हो, यदि वह इन दोनों का पालन करे, तो मन निश्चित रूप से शुद्ध हो जाएगा।

जब मन शुद्ध हो जाता है, तब उसे दूसरों में कोई दोष दिखाई नहीं देता। मन अशुद्ध होने पर ही दूसरों में दोष दिखाई देते हैं। पत्री जी कहा करते हैं कि यदि आपमें अच्छाई हो, तो दूसरों में भी अच्छाई दिखाई देगी। यदि आपमें दोष हो, तो दूसरों में दोष ही दिखाई देंगे। इसलिए यदि आप चाहते हैं कि आपको दूसरों में दोष दिखाई न दें, तो पहले आपमें मौजूद दोषों को सुधारना चाहिए।

आपमें मौजूद दोष, अर्थात मन के दोष हैं। मन मलिन होने पर ही वे दोष व्यक्त होते रहते हैं। यदि मन को शुद्ध कर लिया जाए, तो आपमें

मौजूद दोष दूर हो जाते हैं और फिर किसी में भी दोष दिखाई नहीं देते। किसी का उल्लेख नहीं करते। इसलिए मन को शुद्ध करना चाहिए।

पुराणों में भी यही बात कही गई है, है न! महाभारत में कहा जाता है कि श्रीकृष्ण ने दुर्योधन को बुलाकर कहा, यदि तुम्हारे राज्य में कोई अच्छे लोग हों, तो उन्हें खोजकर आओ। पूरा राज्य घूमकर आया, लेकिन मुझे कोई भी अच्छे लोग दिखाई नहीं दिए। कहा जाता है कि उसने कहा, थोड़ी-बहुत अच्छाई तो केवल मुझमें ही है।

इसी प्रकार श्रीकृष्ण ने धर्मराज को बुलाकर कहा, यदि तुम्हारे राज्य में कोई बुरा व्यक्ति हो, तो उसे खोजकर बताओ। तब वे पूरे राज्य में घूमकर लौटे और बोले, मुझे कोई भी बुरा व्यक्ति दिखाई नहीं दिया। उन्होंने कहा, अगर थोड़ा-बहुत कोई दोष है भी, तो वह मुझमें ही है; मुझे कहीं भी कोई बुरा व्यक्ति दिखाई नहीं दिया।

यहाँ दुर्योधन को कोई भी अच्छा व्यक्ति दिखाई नहीं दिया, जबकि धर्मराज को कोई भी बुरा व्यक्ति दिखाई नहीं दिया। कारण यह था कि धर्मराज के अंदर कोई बुराई नहीं थी, इसलिए उन्हें कोई भी बुरा व्यक्ति दिखाई नहीं दिया। दुर्योधन के अंदर अच्छाई नहीं थी, इसलिए उसे कोई भी अच्छा व्यक्ति दिखाई नहीं दिया। इसका कारण यह था कि दुर्योधन का मन मलिन था और धर्मराज का मन शुद्ध था।

इसलिए मन को शुद्ध करना चाहिए। यदि मन की शुद्धि चाहिए, तो कोई भी हो, उसे निश्चित रूप से गहन ध्यान-साधना करनी चाहिए। अर्थात, चाहे कोई भी हो, यदि इस प्रकार की साधना करनी है, तो भीमवरम में प्रशिक्षण लेना आवश्यक है। चाहे कितनी भी बार कहा जाए, इसे अच्छी तरह समझना चाहिए। आप जितनी अच्छी तरह इसे समझेंगे, उतनी ही

अच्छी तरह ये सभी बातें भी आपको समझ में आएँगी।

3. ''बुद्ध का अष्टांग मार्ग मानसिक शांति और मुक्ति के लिए अच्छा मार्ग है।''

अष्टांग मार्ग का अर्थ है आठ प्रकार के व्यवहार। यदि आप उस प्रकार का व्यवहार करेंगे, तो आपको मन की शांति होगी। बुद्ध ने अपने जीवन में की गई साधना के फलस्वरूप ज्ञानोदय प्राप्त करके (एनलाइटेंड) अपने स्वयं के अनुभव से कही गई बातें। उन्होंने इन आठ बातों को आठ बिंदुओं के रूप में बताया।

देखिए, ये बातें दुनिया के लिए कितनी महान हैं। यदि उनका पालन करें और उन्हें आचरण में लाएँ, तो उनके अनुसार क्यों नहीं जी सकते? उस अवस्था को प्राप्त करने के बाद वे कितनी मन:शांति में थे। उन्हें देखते ही सभी को शांति मिल जाती है। इस प्रकार वे उस उच्च स्तर तक पहुँचे। अपने अनुभव के आधार पर बताई गई वही बातें ''अष्टांग मार्ग'' हैं। वे इस प्रकार हैं:

1. सही दृष्टिकोण : - अच्छे संकल्प होने चाहिए।

2. सही इच्छाएँ : - आवश्यकताओं तक सीमित होना चाहिए। आवश्यकताओं से अधिक इच्छाएँ हमें अशांति की ओर ले जाती हैं। यदि इच्छाएँ केवल आवश्यकताओं तक सीमित हों, तो वे हमें अशांति की ओर नहीं ले जातीं। सही इच्छाएँ अर्थात अपनी क्षमता से अधिक की नहीं इच्छाएँ। यदि तुम्हारे पास कार खरीदने की क्षमता नहीं है, लेकिन कार खरीदने की इच्छा है, तो वह इच्छा तुम्हें अशांति की ओर ले जाएगी। तुम कार खरीदोगे। उसके लिए कर्ज़ लेना पड़ेगा, नहीं तो कोई न कोई गलत

काम करना पड़ेगा। फिर क्या होगा ? आखिर में तुम वह कर्ज़ चुका नहीं पाओगे और अंत में वह कार बेचनी पड़ेगी। फिर मन की शांति कहाँ रहेगी ? इसलिए सही इच्छाएँ होनी चाहिए।

3. सही वाणी :- हमारी वाणी सम्यक होनी चाहिए, वह सही तरीके से होनी चाहिए, सामने वाले को दुख नहीं पहुँचाना चाहिए, और संयमित होनी चाहिए। इस प्रकार पिताजी हमें वाणी के बारे में बताते रहते हैं।

4. सही जीवनयापन :- आपकी कमाई धर्मसम्मत होनी चाहिए।

5. सही व्यवहार + कर्म :- आपका व्यवहार सही तरीके से होना चाहिए।

6. सही श्रद्धाः- श्रद्धा देना चाहिए। जिस पर श्रद्धा देना चाहिए, उसी पर श्रद्धा देना चाहिए। अब यदि मन की शांति चाहिए, तो हम कई बिंदुओं के बारे में बात कर रहे हैं। आप किसी भी बिंदु को देखें, अंततः वह ध्यान के पास आता है। इसलिए उस ध्यान पर ही ध्यान देना चाहिए। वही सही श्रद्धा है। जो आपको प्राप्त है, उसी पर श्रद्धा देना चाहिए।

7. सही जागरूकता :- जिस पर ध्यान देना चाहिए, उसी पर ध्यान होना चाहिए। आप जो भी काम कर रहे हों, उसे करते हुए यदि किसी और चीज़ पर ध्यान देंगे, तो उस काम का क्या होगा ? पहले आप कोई एक बात तय कर लीजिए कि आपको क्या हासिल करना है, क्या प्राप्त करना है, और फिर उसी पर ध्यान केंद्रित कीजिए।

8. सही ध्यानः- यह बहुत-बहुत महत्वपूर्ण है। बुद्ध ने अपने अष्टांग मार्ग में सही ध्यान कहा है। क्योंकि जब वे इस ध्यान मार्ग में आए, तब उन्होंने बहुत से गुरुओं को देखा। उन्होंने अनेक प्रकार की साधनाओं को जाना।

लगभग आठ वर्षों तक साधना करने के बाद भी उन्हें ज्ञानोदय (Enlightenment) नहीं हुआ। अंत में जब उन्होंने "श्वास पर ध्यान"

लगाया, तब उन्होंने वास्तव में वही प्राप्त किया, जिसे वे प्राप्त करना चाहते थे। वे उस ज्ञान को प्राप्त कर सके। तब उन्होंने घोषणा की। उन्होंने बताया कि सही ध्यान क्या है। वह केवल श्वास पर ध्यान ही है। इसके अलावा किसी भी अन्य तरीके से कोई लाभ नहीं होता।

यदि तुम्हारी दृष्टि बातों पर है, तो वह ध्यान नहीं है। यदि तुम्हारा ध्यान शब्दों पर है, तो वह ध्यान नहीं है। यदि गीत पर है, तो वह भी ध्यान नहीं है। यदि संदेशों पर है, या किसी भी चीज़ पर है, तो वह ध्यान नहीं है। इसलिए सही ध्यान ‘‘श्वास पर ध्यान’’ देना ही है। यदि इसे पकड़ लें, तो आपको सभी लाभ प्राप्त होंगे।

हमें चिंता करने की कोई ज़रूरत नहीं है। हर लाभ मिलता है। हम एक-एक करके देखते आ रहे हैं, है न? अब तक बताई गई सभी बातों का यदि ध्यानपूर्वक अवलोकन करें, तो समस्या का मूल आखिर कहाँ पहुँचा? वह ‘‘मन’’ तक पहुँच गया। मन किससे ठीक होता है? तो वह केवल ध्यान से ही ठीक होता है।

मन को नियंत्रित करना हो, मन को शुद्ध करना हो, मन में परिवर्तन लाना हो, मन पर अधिकार प्राप्त करना हो, या मन को वश में करना हो, यह सब केवल ‘‘श्वास पर ध्यान’’ के द्वारा ही संभव है।

इसीलिए पत्री जी भी कहते हैं। ओशो ने सौ प्रकार के ध्यान बताए। वही गलत है। ध्यान तो केवल एक ही है, ‘‘श्वास पर ध्यान’’, ऐसा उन्होंने कहा।

इसलिए यदि आप बुद्ध के अष्टांग मार्ग का भी अभ्यास करेंगे, तो आप मानसिक शांति के साथ जीवन जी सकेंगे और मानसिक शांति प्राप्त करेंगे।

4. ''दूसरे क्या सोचेंगे, ऐसा सोचने वाले को, जीने वाले को मन की शांति नहीं होती। जो व्यक्ति स्वतंत्र रूप से जीता है, उसे मन की शांति होती है।''

दूसरे क्या सोचेंगे, ऐसा सोचने वाले को, जीने वाले को मन की शांति नहीं होती। जो व्यक्ति स्वतंत्र रूप से जीता है, अर्थात स्वयं अपने निर्णय लेकर अपनी इच्छा के अनुसार करने वाले को, जीने वाले को मन की शांति मिलती है। दुनिया में क्या हो गया है कि आजकल जहाँ भी देखें, कोई भी काम करें, लोग वही करते हैं जो दूसरे उनके बारे में क्या सोचेंगे। चाहे वह काम कितना भी कठिन क्यों न हो, फिर भी लोग दूसरों के लिए ही करते हैं, यह सोचकर कि दूसरे क्या सोचेंगे।

इस पिरामिड सोसाइटी में, इस मार्ग पर आकर भी, बहुत से लोग आज भी दूसरों के बारे में ही सोचते हुए जी रहे हैं। यह ज़रूरी नहीं है, इससे कोई लाभ नहीं है, यह बात बहुत-से अवसरों पर जान लेने के बाद भी, लोग वही करते रहते हैं कि दूसरे क्या सोचेंगे।

यह पहले से ही सभी लोगों में आदत बन गई है। इस तरह सब लोग दूसरों के बारे में ही सोचते हैं। विवाहों में यदि कोई काम न करें, तो लोग क्या सोचेंगे, यही सोचकर करते हैं। इसी तरह इस ध्यान मार्ग में आने वाले लोग भी, पहले से अपनी जाति और अपने गाँव में चली आ रही आदत के कारण, जब भी कोई समारोह या पार्टी होती है, तो मुर्गों को मारना, बकरों को काटना और भोज करवाते हैं।

उसे यह समझ में आ गया कि वह पाप नहीं करना चाहिए। लेकिन अगर छोड़ दें, तो सब लोग क्या सोचेंगे, सबकी बातें सुननी पड़ेंगी, लोग मुझे छोटी नज़र से देखेंगे, मेरे बारे में तरह-तरह की बातें कहेंगे, इसी भावना से वे वह गलती करते हैं।

क्या होगा ? अगर आप वह काम करेंगे जो नहीं करना चाहिए, तो उन कष्टों को आपको भुगतना पड़ेगा। इसी तरह हर परिस्थिति में, हर मामले में, दूसरे क्या सोचेंगे, यही सोचकर करते रहते हैं।

उसकी उतनी हैसियत नहीं होती, फिर भी दूसरे क्या सोचेंगे, यह सोचकर, वह काम करने की इच्छा न होने पर भी करता है। ऐसे लोगों को मन की शांति नहीं होती। कारण यह है कि बहुत से लोग भोजों में जाते रहते हैं।

लेकिन जो व्यक्ति स्वतंत्र रूप से जीता है, उसे ही मन की शांति होती है। स्वाभाविक रूप से भोजों में मांसाहारी और शाकाहारी भोजन परोसा जाता है। ये लोग जाते हैं। अगर वह वहाँ जाकर स्वाभाविक रूप से ऐसी चीज़ें खा ले, तो वह कई वर्षों से, कई महीनों से की हुई अपनी ध्यान-साधना का सारा फल खो देता है।

वहाँ जाने के बाद अगर वह नहीं खाएगा, तो वे उसे खाइए, खाइए कहकर बार-बार आग्रह करेंगे। नहीं तो वे कहेंगे, शाकाहारी भोजन है, कम-से-कम वही खाकर जाइए। ऐसे अशुद्ध बर्तनों में पकाया हुआ भोजन खाएँ तो उन्हें अपनी शक्ति खोनी पड़ती है। लेकिन अगर वह यह सोचकर खा ले कि दूसरे क्या सोचेंगे, तो वह अपनी शक्ति खो देता है। लेकिन अगर वह यह सोचकर कि लोग क्या सोचते हैं, उससे मुझे क्या ?, उनकी परवाह किए बिना न खाए, तो वह अपनी शक्ति बनाए रखता है।

इस प्रकार दूसरों के बारे में सोचने वाले, मैं जो कर रहा हूँ, वह सही है या नहीं, इस पर विचार करके निर्णय लेना चाहिए। तुम जिसे सही समझते हो, चाहे कोई कुछ भी सोचे, इसकी परवाह नहीं करनी चाहिए। मैं हमेशा कहता रहता हूँ, तुम अपना काम करो, दूसरों के झगड़ों से तुम्हें कोई

मतलब नहीं है।

पत्रीजी भी यही कहते हैं, आपको स्वयं सोचना चाहिए। कोई कुछ भी सोचे, उससे मुझे क्या? जो मैं कर रहा हूँ, वह सही है, ऐसा मानकर करना चाहिए। तो फिर यह स्थिति कैसे आती है? अर्थात यह निश्चित रूप से जानना चाहिए कि हम स्वयं कौन हैं। यदि यह बात आपको समझ में आ जाए, तो आप दूसरों के बारे में नहीं सोचेंगे।

स्वाभाविक रूप से इस शरीर को देखकर लोग यही मान लेते हैं कि यही शरीर मैं हूँ। जिस परिवार में जन्म हुआ, लोग अपने आपको उसी परिवार का ही मानते हैं। जिस जाति में जन्म हुआ, उसी जाति का मानते हैं। जिस धर्म में जन्म हुआ, उसी धर्म का मानते हैं। क्या सचमुच आप उसी परिवार के हैं? क्या आप उसी जाति के हैं? क्या आप उसी धर्म के हैं? इनमें से कोई भी नहीं, ''आप आत्माएँ हैं।''

आत्मा स्वरूप आप किसी कारणवश कुछ पाठ सीखने के लिए इस प्रकार जन्म लिया है, यह शरीर धारण कीया है। इसी कारण आप इस जाति, इस परिवार और इस धर्म में हैं। अगले जन्म में किसी दूसरी जाति, किसी दूसरे परिवार और किसी दूसरे धर्म में जन्म लेंगे।

तो आखिर आप कौन हैं? अर्थात मुझे यह जानना चाहिए कि मैं आत्मा हूँ। पत्रीजी, मैं एक जन्म में बुद्ध का प्रिय शिष्य और एक बौद्ध था। उसके बाद मैंने अमेरिका में बेंजामिन फ्रैंकलिन के रूप में, एक ईसाई के रूप में जन्म लिया। उसके बाद मैंने हैदराबाद में एक सूफ़ी मास्टर के रूप में, एक मुसलमान के रूप में, हज़रत इनायत ख़ान के रूप में जन्म लिया। इसी प्रकार अब मैंने एक ब्राह्मण परिवार में सुभाष पत्री के रूप में जन्म लिया।

अब मेरी कौन-सी जाति कहलाएगी? मेरा कौन-सा धर्म कहलाएगा? अगर मैं जान लूँ कि मैं कौन हूँ, अगर मुझे यह समझ में आ जाए कि मैं आत्मा हूँ, तब यह सब नहीं रहेगा। फिर दूसरों के बारे में नहीं सोचूँगा। यदि मैं अपने आपको शरीर मानूँ, तो ये मेरे लोग हैं, ये मेरी जाति के लोग हैं, ये मेरे धर्म के लोग हैं, ऐसा सोचूँगा।

इसलिए सबसे पहले यह जानना चाहिए कि हम कौन हैं। रमण महर्षि जी भी यही कहते हैं, तुम कौन हो, इसे जानो। कोई भी हो, सबसे पहले यह जानना ही चाहिए। जब तक यह ज्ञात नहीं होता, तब तक जीवन का समाधान नहीं मिलता। पहले उसे जानना चाहिए, फिर उसे अपने अनुभव में लाना चाहिए। और इस प्रकार जानना हो, तथा उसे अपने अनुभव में लाना हो, तो इन सबके लिए एक ही मार्ग है, वही है '' श्वास पर ध्यान।''

वह ध्यान करके रमण महर्षि ने जाना। वह ध्यान करके गौतम बुद्ध ने जाना। वह ध्यान करके वीरब्रह्मेन्द्र स्वामी, स्वामी विवेकानंद, राघवेंद्र स्वामी और ऐसे अनेक महापुरुषों ने जाना। सुभाष पत्री भी यही कहते हैं कि वही करके जानो।

इसलिए जो लोग अपनी '' श्वास पर ध्यान'' रखते हैं और स्वयं को जान लेते हैं, वे अपने आप दूसरों के बारे में नहीं सोचते, बल्कि अपने ही बारे में सोचते हैं। मुझे दूसरों के झगड़ों से क्या लेना-देना? वे भी मेरी तरह ही यहाँ आए हैं, वे अपना काम करेंगे। मुझे अपना काम करना है। इसलिए जिस बात को जानना है, उसी पर ध्यान केंद्रित करते हैं और जो लाभ प्राप्त होने वाला है, उसी पर ध्यान देते हैं।

ऐसे लोगों के मन में यह बात नहीं आती कि दूसरे क्या सोचेंगे। वे दूसरों के बारे में सोचकर नहीं जीते और न ही इस चिंता में जीते हैं कि दूसरे क्या सोचेंगे। वे यह देखते हैं कि जो वे कर रहे हैं, वह सही है या नहीं। जब उन्हें पता चलता है कि वह सही है, तो वे उसे निश्चित रूप से आचरण में लाते हैं। ऐसे लोगों को मन की शांति होती है।

वे जितनी देर, यह जानते हुए भी कि वह गलत है, दूसरों के बारे में सोचकर काम करते रहते हैं। उन्हें शांति कहाँ मिलेगी ? वे वह काम कर रहे हैं, जो नहीं करना चाहिए। यह जानते हुए भी क्यों ? क्योंकि वे सोचते हैं कि दूसरे क्या सोचेंगे। इसलिए सबसे पहले मुझे यह जानना चाहिए कि मैं आत्मा हूँ।

सचमुच, अगर मैं अपने जीवन को देखूँ, तो मेरे जीवन ने पूरी तरह यू-टर्न ले लिया। उससे पहले मेरा जीवन एक अलग तरह का था। पत्रीजी के माध्यम से मैंने जाना कि मैं कौन हूँ। जब उन्होंने यह कहा, तो पहले मुझे समझ में नहीं आया और मैंने विश्वास भी नहीं किया। उन्होंने कहा, ''तुम शरीर नहीं हो, तुम आत्मा हो।'' उसके बाद मैंने पुस्तकें पढ़ीं, उनका अध्ययन किया, तरह-तरह के प्रश्न पूछे और स्वयं सत्यापन करने के बाद जब मुझे यह समझ में आया कि पत्रीजी ने जो कहा था, वह अक्षरशः सत्य है, तब मेरा पूरा जीवन ही बदल गया।

उससे पहले मैं परिवार, गृहस्थी और ऐसी ही बातों के लिए परेशान रहता था। अब कोई झंझट नहीं है। अब तक मैं जो भी कमाई करता था, वह केवल बड़ा बनने और लोगों से बड़ा कहलाने के लिए उन्हीं बातों पर अधिक ध्यान देता था। जब मुझे यह पता चला कि मैं आत्मा हूँ और आत्मा को जिस चीज़ की आवश्यकता है, वह ज्ञान है, तब मेरा

जीवन बदल गया।

जब मुझे यह समझ में आया कि ये पद, प्रतिष्ठा और यह सब कुछ भी मेरे साथ नहीं आने वाला है, तब मैंने सोचा कि जिनसे मुझे कोई लाभ नहीं मिलने वाला, उन पर मैं क्यों ध्यान दूँ? इसलिए पिछले 23 वर्षों से मैंने यह सब पूरी तरह छोड़ दिया है। परिवार में चाहे समारोह हो रहे हों या कुछ भी हो रहा हो, हम उसकी ज़्यादा परवाह नहीं करते। अगर अवसर मिलता है तो चले जाते हैं, नहीं तो जाते नहीं। अगर जाते भी हैं, तो थोड़ी देर ही रुकते हैं।

इसलिए इन सभी बातों को अच्छी तरह याद रखना चाहिए। अगर हम यह सोचते रहें कि दूसरे क्या सोचेंगे, तो मन की शांति नहीं रहेगी। आपको दूसरों के झगड़ों से कोई मतलब नहीं होना चाहिए। वे क्या सोचते हैं, उससे आपको क्या? बस यह सोचिए कि जो आप कर रहे हैं, वह सही है? या नहीं? ऐसा सोचकर करेंगे, तो निश्चित रूप से आपकी शांति बनी रहेगी।

इसलिए यदि इस स्थिति प्राप्त करनी है, तो ध्यान करना ही होगा। यह हर किसी के लिए आवश्यक है। इसलिए पत्रीजी कहते हैं, ध्यान करने से सभी लाभ होते हैं और ध्यान न करने से सभी नुकसान होते हैं।

5.''अत्यधिक मोह और ममत्व मन की शांति को छीन लेते हैं।''

स्वाभाविक रूप से हर किसी का किसी-न-किसी के प्रति ममत्व होता है। अर्थात, व्यक्ति को अपनी पत्नी, पुत्रों, धन, अपनी वस्तुओं और अपनी कमाई हुई संपत्ति के प्रति ''ममत्व'' होता है। यदि वह अत्यधिक बढ़ जाए, तो मन की शांति खोते रहते हैं।

यदि यहाँ गौर करें, तो कोई भी चूहे के मरने पर दुःखी नहीं होता, लेकिन तोते के मरने पर दुःखी हो जाता है। कारण यह है कि तोते के प्रति ममत्व और उससे लगाव होने के कारण उसके मरने पर दुःख होता है। इसी प्रकार अपने लोग कोई भी हों, यदि वे दूर हो जाएँ, तो दुःख होता है; लेकिन दूसरे लोग दूर हो जाएँ, तो दुःख नहीं होता। इसलिए आप देखिए, यदि यह पता चले कि किसी ट्रेन दुर्घटना में 100 या 200 लोग मर गए, तो हम केवल इतना ही कहते हैं, अरे! दुर्घटना हो गई? इतने लोग मर गए?

यदि वही आपका कोई निकट संबंधी हो, या फिर वह उसी ट्रेन दुर्घटना में मारा गया हो, तब व्यक्ति अत्यधिक दुःख में डूब जाता है। इसी प्रकार यदि यह सुनने में आए कि युद्ध में बहुत-से सैनिक मारे गए, तो लोग उसे केवल एक समाचार के रूप में ही देखते हैं। लेकिन यदि आपके अपने लोगों में से कोई मर जाए, तो अत्यधिक दुःखी हो जाता है। फिर इस तरह क्यों दुःखी हो जाते है? अर्थात ये मेरे अपने हैं यही भावना और उनके प्रति ममत्व ही उसका कारण है। वही ममत्व मन की शांति को दूर कर देता है।

इसलिए पत्रीजी हमें बताते हैं कि ममत्व नहीं रखना चाहिए। सबके साथ रहना चाहिए, लेकिन किसी के प्रति ममत्व नहीं होना चाहिए। उन्होंने क्या कहा? कमल के पत्ते पर पानी की बूँद की तरह जीवन जीना चाहिए। अर्थात जल की बूँद कमल के पत्ते पर ही रहती है, लेकिन उससे चिपकती नहीं है।

इसी प्रकार आप संसार में ही रहते हैं। पत्नी, बच्चों, पति और परिवार के सभी लोगों के साथ रहते हैं, सबके बीच रहते हैं, लेकिन उनके प्रति ममत्व नहीं होना चाहिए। जिन लोगों में ममत्व होता है, उनके अपने

लोगों के साथ कुछ भी हो जाए, या वे उनसे दूर हो जाएँ, तो वे अत्यधिक दु:खी हो जाते हैं और अशांत हो जाते हैं।

यदि ममत्व नहीं है, तो दु:ख भी नहीं होगा। यदि वे दूर हो जाएँ, या फिर उन्हें किसी प्रकार की कोई परेशानी आ जाए, तो मैं उन्हें आवश्यक सहायता प्रदान करूँगा। वे उनकी आवश्यकताओं का ध्यान रखते हैं, लेकिन दु:खी नहीं होते। लेकिन यदि ममत्व हो, तो वे कहते हैं, जब वे ही नहीं रहे, तो मैं भी नहीं जीऊँगा। अब मेरे जीने का क्या अर्थ है ?स्त्रस्त्र ऐसा कहकर वे अत्यधिक दु:ख में डूब जाते हैं।

ऐसे ममत्व को दूर करना चाहिए। इसके लिए सबसे पहले आपको यह जानना चाहिए कि आप कौन हैं। भज गोविन्दम् में आदि शंकराचार्य कहते हैं। वे कहते हैं, तुम कौन हो ? तुम्हारी माता कौन है ? तुम्हारे पिता कौन हैं ? इन सब बातों को सबसे पहले जानो। इन सबके बारे में विचार करने के लिए कहते हैं। जब आप इन सभी बातों पर विचार करेंगे, तब आपको समझ में आएगा।

तब आपको यह समझ में आएगा कि आप एक आत्मा हैं। तब यह समझ में आएगा कि यह शरीर मैं नहीं हूँ। मैं आत्मा हूँ, और मैं ऊपरी लोकों से आया हूँ। किसलिए ? वहाँ अपनी उन्नति और आत्मिक विकास के लिए। फिर यहाँ विकास कैसे होता है ? आत्मा पृथ्वी पर आकर एक शरीर धारण करके उस शरीर के माध्यम से कुछ अनुभव प्राप्त करके, जीवन के पाठ सीखकर, साधना करके, अपने ज्ञान को बढ़ाकर, फिर जब वापस ऊपर के लोकों में जाती है, तब वह और भी उच्च एवं '' श्रेष्ठ लोक में'' पहुँच सकती है।

उसी के लिए हर कोई पृथ्वी पर आता है। इसी प्रकार हर कोई अपने-अपने लिए आता है। सृष्टि में करोड़ों-करोड़ों लोक हैं। एक-दो नहीं, करोड़ों-करोड़ों लोक हैं। इसी प्रकार विभिन्न लोकों में रहने वाली आप सभी विभिन्न प्रकार की आत्माएँ भी उन कार्यों को करने और अनुभव प्राप्त करने के लिए पृथ्वी पर आती हैं।

इस प्रकार एक जन्म में पुरुष का शरीर, एक जन्म में स्त्री का शरीर, एक जन्म में धनवान, एक जन्म में गरीब-इस प्रकार विभिन्न प्रकार के अनुभव प्राप्त करने के लिए अलग-अलग जन्म लेते हैं। इस प्रकार पृथ्वी पर आकर, उसके बाद यहाँ रहना है और यह सब प्राप्त करना है, तो पृथ्वी पर हर व्यक्ति की कुछ आवश्यकताएँ होती हैं। इन आवश्यकताओं के लिए अनिवार्य रूप से साथ रहना पड़ता है।

इसलिए मुख्य आवश्यकताएँ क्या हैं ? मुख्य रूप से जन्म लेते ही भोजन की आवश्यकता होती है। साथ ही रहने के लिए घर की आवश्यकता होती है। और वस्त्रों की भी आवश्यकता होती है, अर्थात पहनने के लिए कपड़े चाहिए। इसके साथ पुरुष को स्त्री का साथ और स्त्री को पुरुष का साथ भी चाहिए। इसके बिना जीवन जीना बहुत कठिन है। ये सभी आवश्यकताएँ हैं।

कोई भी हो, पृथ्वी पर आने के बाद सबसे पहले इन आवश्यकताओं को जुटा लेता है। इन आवश्यकताओं को जुटाकर, वह जिस काम के लिए आया है, उसे करने का प्रयास करता है। फिर अपना काम पूरा होने के बाद चले जाते हैं।

यानी हर व्यक्ति पहले से ही वहाँ सब कुछ तय करके आता है। वह समय पूरा होते ही हर कोई अपनी-अपनी राह चला जाता है। सब

लोग मिलकर नहीं जाते। एक-दूसरे से उनका कोई संबंध नहीं है। कुछ लोग बहुत छोटी उम्र में ही चले जाते हैं। कुछ लोग विवाह के बाद चले जाते हैं। कुछ लोग उम्र बढ़ने के बाद चले जाते हैं, और कुछ लोग वृद्धावस्था में चले जाते हैं। इस प्रकार, हर व्यक्ति अपने पहले से निर्धारित समय के अनुसार चला जाता है।

वे एक-दूसरे के लिए नहीं होते। जब इस जान लेते हैं, यह ज्ञान प्राप्त कर लेते हैं, तब यह बात समझ में आती है। अरे! हम साथ-साथ रहेंगे और एक-दूसरे की ज़रूरतों का ध्यान रखेंगे। हम एक-दूसरे से प्रेम करेंगे और एक-दूसरे के साथ रहेंगे। लेकिन जब यह ज्ञान हो जाता है कि जिसका काम पूरा हो जाता है, वह चला जाता है, तब न दुःख होता और न ही ममत्व रहता।

इसलिए वे अपना ध्यान केवल उसी पर केंद्रित करते हैं, जो उन्हें स्वयं करना है और जो उन्हें स्वयं अर्जित करना है। इस प्रकार उसी पर ध्यान केंद्रित करके उसे प्राप्त करने का प्रयास करते हैं। तब ममत्व नहीं रहता। तब चाहे कोई दूर हो जाए, चाहे किसी की मृत्यु हो जाए, या कुछ भी हो जाए, वे अशांत नहीं होते। यही अत्यधिक मोह और इसी प्रकार का ममत्व ही मन की शांति को छीन लेता है।

इसलिए उस ममत्व को दूर करना चाहिए। तभी आप शांति से जीवन जी पाएँगे। इसके लिए यह सब जानना चाहिए और इस ज्ञान को अर्जित करना चाहिए।

6.''जितना कम प्रेम करोगे, उतनी मन की शांति।''

प्रेम करना चाहिए, प्रेम किए बिना नहीं रहना चाहिए। हर चीज़ से प्रेम करना चाहिए, सबको प्रेम करना चाहिए। प्रेम ''स्वाभाविक'' होना

चाहिए, लेकिन अत्यधिक नहीं होनी चाहिए। यही बात पत्रीजी कहते हैं। वे कई बार कहते हैं कि कोई भी चीज़ न तो अत्यधिक होनी चाहिए और न ही बहुत कम। हर चीज़ सीमा में होनी चाहिए।

भगवान बुद्ध का संदेश भी यही है। वे हर व्यक्ति से कहते हैं कि हर बात में ''मध्यम मार्ग'' अपनाना चाहिए। यदि इस प्रकार हर बात में मध्यम मार्ग का पालन किया जाए, तो किसी भी परिस्थिति में व्यक्ति शांत ही रहता है। यदि कोई भी चीज़ अत्यधिक हो जाए, तो वह अनर्थ का कारण बनती है। यदि वह बहुत कम हो, तब भी वह अनर्थ कारण बनती है।

इसलिए हर बात में मध्यम मार्ग का पालन करना चाहिए। इसी प्रकार दूसरों से प्रेम करने के विषय में भी यह नहीं कहा गया है कि प्रेम मत करो या प्रेम नहीं करना चाहिए। प्रेम करना चाहिए, प्रेमपूर्वक रहना चाहिए और प्रेममय होना चाहिए। हर व्यक्ति से प्रेम करना चाहिए, हर चीज़ से प्रेम करना चाहिए, हर वस्तु के प्रति प्रेम रखना चाहिए, लेकिन वह प्रेम अत्यधिक नहीं होना चाहिए। इस बात को समझना चाहिए।

7. ''फल की अपेक्षा से किए जाने वाले कर्म भी मन की शांति को छीन लेते हैं।''

इसलिए फल की अपेक्षा के बिना कर्म करने से शांति प्राप्त होती है। ज़्यादातर लोग कोई भी काम करने से पहले उसके फल की अपेक्षा रखते हैं, और उसी फल की आशा करते हुए वह काम करते रहते हैं।

ऐसा करने से कई बार आपको मनचाहा फल नहीं मिलता और सब कुछ आपकी अपेक्षा के अनुसार नहीं होता। आपने जो सोचा था, उसके विपरीत होता है। तब वे अशांत हो जाते हैं। मैंने इतनी मेहनत की,

इतना सब किया, फिर भी आखिर में ऐसा क्यों हुआ? ▪ऐसा सोचकर वे बहुत अशांत हो जाते हैं।

इसलिए तुम्हारा अधिकार केवल कर्म करने तक ही है, लेकिन उसके फल की आशा करने का अधिकार तुम्हें नहीं है। ऐसा भगवद्गीता में कहा गया है। पत्री जी भी यही कहते हैं कि तुम जितनी देर तक कर्म करने का प्रयास करो। तुम्हारे किए हुए कर्म का फल अवश्य मिलेगा।

लेकिन तुमने जो कर्म किया है, उसका क्या फल मिलना चाहिए, यह तय करने वाले तुम नहीं हो। कर्म करना तुम्हारी इच्छा है, लेकिन उसका फल क्या होगा, इसका निर्णय भगवान करते हैं। उसके अनुसार क्या मिलना है और कब मिलना है, यह सब प्रकृति के निर्णय के अनुसार ही होता है ▪ऐसा कहा जाता है।

इसीलिए भगवद्गीता में कहा गया है, ''कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।'' अर्थात तुम्हें केवल कर्म करने का अधिकार है, लेकिन उसके फल की आशा करने का अधिकार तुम्हें नहीं है। तुम्हें केवल कर्म करने का अधिकार है। तुम अपनी पसंद का कर्म कर सकते हो।

तुम अच्छा करो, बुरा करो, या कुछ और करो, या मत करो, यह तुम्हारी इच्छा है। इसे करने से तुम्हें कोई नहीं रोक सकता। तुम्हें वह स्वतंत्रता है। लेकिन परिणाम तुम्हारे हाथ में नहीं है, यह बात हमें स्पष्ट रूप से बताई गई है। अगर आप इस बात को ठीक से समझें और इन बातों का गहराई से विश्लेषण करें, तो स्पष्ट हो जाता है कि चाहे कोई भी हो कर्म के फल की अपेक्षा नहीं करनी चाहिए।

तुमने कोई कार्य शुरू किया है। उसे शुरू करना ही तुम्हारा काम

है। उसके बाद वह सफल होगा या नहीं होगा, इसकी चिंता करना तुम्हारा काम नहीं है। अगर वह असफल हो गया, तो तुम अशांत हो जाओगे। इसलिए ''कर्म करना मेरा काम है'' - ऐसा सोचकर तुम अपना कर्म करते रहो। उसके फल की चिंता तुम्हें क्यों करनी है ?

स्वाभाविक रूप से अभी इस ध्यान मार्ग में आए हुए बहुत से लोग, पत्री जी द्वारा बताई गई बातों के अनुसार और सबके कहने के अनुसार कहते हैं, आपको जितना भी ज्ञान है, वह सबको बताइए। ठीक है, बहुत से लोग अपने जानने वालों को, उन लोगों को और इन लोगों को भी बताते रहते हैं। जब आप बताते रहते हैं, तो स्वाभाविक रूप से कुछ लोग सुनते हैं और कुछ लोग नहीं सुनते।

कभी-कभी बहुत से लोग, ये लोग चाहे कुछ भी कहें, फिर भी लोग नहीं सुनते। वे बहुत हतोत्साहित हो जाते हैं। हतोत्साहित होकर वे कहते रहते हैं, अरे! मैंने इतने लोगों को बताया, लेकिन एक भी व्यक्ति इस पर ध्यान नहीं दे रहा है, कोई भी ध्यान नहीं कर रहा है। वे बहुत अधिक अशांत होते रहते हैं।

पत्री जी ने कहा है कि सबको बताओ, लेकिन उसने किया या नहीं, उससे तुम्हें क्या मतलब ? अगर आप बताएँगे, तो उसका फल आपको मिलेगा। तुम अपने लिए ही बता रहे हो। वह यदि आचरण करेगा, तो उसका फल उसे मिलेगा और यदि आचरण नहीं करेगा, तो उसे वह फल प्राप्त नहीं होगा। यदि वह आचरण नहीं करेगा, तो उससे तुम्हें कोई नुकसान नहीं है; यह उसकी अपनी इच्छा है।

इसी तरह बहुत से लोगों से मांसाहार छोड़ने के लिए बताते रहते हैं। तुम अपने जानने वालों, रिश्तेदारों और मित्रों से मांसाहार छोड़ने के

लिए बताते रहते हो। ये लोग क्या सोचते हैं कि हम बताएँगे, इसलिए वे हमारी बात ज़रूर सुनें। लेकिन यहाँ हमारा काम केवल बताने तक ही है। वे सुनें या न सुनें, उससे आपका कोई संबंध नहीं है। यह बात हर किसी को जाननी चाहिए। वे सुनें तो हमें क्या, न सुनें तो हमें क्या ? हमारा काम केवल बताने तक ही है।

आप किसी अच्छे कार्य के लिए, चाहे पिरामिड निर्माण हो, यज्ञ हो या इसी प्रकार के अन्य कार्य हों, उनके लिए कुछ दान एकत्र करने के लिए निकल पड़ते हैं। निकल पड़ना ही आपकी ज़िम्मेदारी है। इसी तरह आप लोगों से दान माँगते हैं। लेकिन आपने माँगा है, इसलिए सभी लोग दें, ऐसा नहीं है। देने वाला देगा, नहीं तो नहीं।

इसी तरह आप सोचते हैं कि इतना मिलेगा। सोचने में क्या है ? सोच सकते हैं। गलत कुछ भी नहीं है, लेकिन आपने जो सोचा था, उससे बहुत कम आए, तो आप बहुत अशांत हो जाते हैं। मैं इतनी मेहनत करके घूमा। बस, इतना ही हुआ है। लेकिन यहाँ तक ही तुम्हारा काम है। उसके बाद जो परिणाम या फल है, वह तुम्हारे हाथ में नहीं है।

यदि तुम अपना कर्तव्य करोगे, तो प्रकृति जैसा निर्णय करेगी, वैसा ही होगा। इसलिए प्रत्येक व्यक्ति को इस बात का ध्यान रखना चाहिए। चाहे कुछ भी हो, हर विषय में हमें करने को ही महत्व देना चाहिए। यदि हम इस प्रकार करते रहेंगे, तो जो होना है, वही होगा।

आप जो कर रहे हैं, वह अच्छा ही है। ऐसा कोई नहीं कहेगा कि वह अच्छा नहीं है। मैंने अच्छा काम किया, फिर भी ऐसा क्यों हो रहा है ? ऐसा नहीं सोचना चाहिए। महान लोगों का, बड़े लोगों का – सबका यही सिद्धांत है। वे हर समय केवल करने पर ही ध्यान देते हैं। फल के बारे में

नहीं सोचते। उस बात की वे बिल्कुल परवाह नहीं करते। प्रकृति ने इतना ही निर्णय लिया है। कोई बात नहीं, फिर वे कोई-न-कोई दूसरा काम करने लग जाते हैं।

जो होना है, वह जब होना है, तब होगा। हम इतने सारे टार्गेट रखकर, टाइम रखकर, इतना होना चाहिए, उतना होना चाहिए ऐसा निर्णय लेने वाले आप कौन होते हैं ? जो जितना होना है, जब होना है, क्या होना है और यह सब कब होना है, वह सब उसी समय होगा।

इसलिए फल की अपेक्षा से किए जाने वाले कर्म हमारी शांति को हर लेते हैं। फल की अपेक्षा के बिना कर्म करेंगे, तो शांति से जीवन जी सकेंगे और शांति प्राप्त कर सकेंगे। यह बात हर किसी को जाननी चाहिए। नहीं तो जीवन में हमेशा कुछ न कुछ करते ही रहेंगे और यही सोचते रहेंगे कि वह नहीं मिला, यह नहीं मिला।

इसलिए इस पॉइंट को भी अच्छी तरह याद रखना चाहिए। इस स्तर तक पहुँचना है और इस प्रकार का जीवन जीना है, तो अपनी बुद्धि को अच्छी तरह विकसित करना होगा, तब इन सब बातों पर अच्छी तरह विचार कर सकेंगे। बुद्धि जितनी विकसित होगी, उतनी ही ये सभी बातें समझ में आएँगी। तब वे करने को ही महत्व देते हैं, लेकिन फल के बारे में नहीं सोचते। जो जिस समय मिलना होता है, वह उसी समय मिलता है।

इसी तरह बहुत से लोग ध्यान करते समय बहुत-सी अपेक्षाएँ रखते हुए ध्यान करते हैं। यह मिलना चाहिए, यह कम होना चाहिए, मेरी आर्थिक समस्याएँ दूर हो जानी चाहिएँ, या फिर ऐसा होना चाहिए, मेरा विवाह हो जाना चाहिए, या फिर यही होना चाहिए-ऐसी अनेक अपेक्षाएँ मन में रखकर वे ध्यान करते हैं। यदि फिर भी वैसा नहीं होता, तो वे पूछते

हैं, ध्यान करने से तो कहते हैं कि सब कुछ हो जाता है, फिर ऐसा क्यों नहीं हुआ ? ऐसा कहकर वे बहुत निरुत्साहित हो जाते हैं। वे यह कहने वालों से बार-बार पूछते रहते हैं। यहाँ केवल करना ही आपकी ज़िम्मेदारी है, लेकिन उसका फल आपके हाथ में नहीं है। यदि तुम फल की अपेक्षा करके काम करोगे और वह प्राप्त नहीं होगा, तो तुम बहुत निरुत्साहित हो जाओगे। यदि सचमुच फल की अपेक्षा किए बिना कार्य करोगे, तो उचित समय आने पर वह अपने आप मिल जाएगा।

यदि वह न भी मिले, तो भी तुम बिल्कुल निरुत्साहित नहीं होगे और अशांत भी नहीं होगे। इसलिए यह भी बहुत महत्वपूर्ण है। यदि हर व्यक्ति मन की शांति से जीना चाहता है, तो इस बात को भी अच्छी तरह जानना चाहिए।

8. ''यदि विचार सक्रम हो तो शांति, अक्रम से हो तो अशांति।''

यदि तुम सक्रम विचारों के साथ रहोगे, तो तुम्हें शांति मिलेगी। यदि कोई हमेशा अक्रम विचारों में डूबा रहे कि वह बर्बाद हो जाए, उसका नाश हो जाए, उसे नुकसान हो जाए, उसका अपमान हो जाए। इस प्रकार के यदि वह ऐसे-ऐसे विचार सोचता रहता है तो ये सब सक्रम विचार नहीं हैं, बल्कि अक्रम विचार हैं। वही यदि कोई यह सोचे कि 'वह अच्छा रहे, यह अच्छा रहे', तो ये सही विचार हैं।

लेकिन वह चला जाए, यह चला जाए, ऐसे विचार ''सक्रम विचार'' कैसे हो सकते हैं ? नदी का पानी सक्रम रूप से बहे तो कोई खतरा नहीं होता; लेकिन अक्रम रूप से बहे, तभी खतरा होता है। इसलिए ऐसा कहा जाता है।

आप देखिए, जब बाढ़ नहीं होती, तब नदी का पानी सक्रम रूप से ही बहता है। वह नदी सामानय रूप से बहती है। लेकिन जब बाढ़ आती है और पानी का प्रवाह बढ़ जाता है, तब कई जगह नदी के किनारे टूट जाते हैं और पूरे के पूरे गाँव डूब जाते हैं। और सचमुच, जब बाढ़ पूरे गाँवों को डुबो देती है, तब लोगों को कितनी तरह की परेशानियाँ और कितने प्रकार के दु:ख सहने पड़ते हैं! वह सब तो एक बड़ी आपदा ही है, है न?

इसलिए इसे याद रखिए। इसी प्रकार, यदि विचार सक्रम हों, तो कोई समस्या नहीं होती। लेकिन यदि विचार अक्रम हों, तो उसे छोड़िए, आप ही बर्बाद हो जाएँगे। परेशानी आपको ही होगी। जिस व्यक्ति के विचार अक्रम होते हैं, वह वैसे ही कार्य करता है। और जिसके विचार सक्रम होते हैं, वह अच्छे कार्य ही करता है।

यदि किसी के विचार अक्रम हों, तो वह उसके नाश और इसके नाश की कामना करता है। वह यही सोचता है कि उसे बिगाड़ दूँ, इसे बिगाड़ दूँ। और फिर वैसे ही कर्म करता है। सृष्टि के नियमों के विरुद्ध है। जो भी सृष्टि के नियमों के विरुद्ध कर्म करता है, उसे उसके फल का भोग अवश्य करना पड़ता है।

Programs by the Tatavarthy's that will be broadcasted on YouTube:

a) Channel name: **Tatavarthy Veera Raghava Rao**

This channel has 2,000+ videos featuring messages from Mr and Mrs Tatavarthy.

b) PMC has also launched a YouTube channel for Brahmarshi Tatavarthy Veera Raghava Rao.

Channel name: **Brahmarshi Tatavarthy Veera Raghava Rao.**

c) For messages from trainees who have trained under Mr. and Mrs. Tatavarthy, watch the Tatavarthy Spiritual Trainees YouTube channel.

d) You can also go directly to the YouTube app, type Tatavarthy Veera Raghava Rao in the search bar, and watch all the Mr. and Mrs.Tatavarthy videos.

Information available on Tatavarthy's website:

Website address: www.tst.org.in

a) Details of programs conducted under the guidance of Mr. and Mrs. Tatavarthy and Google Maps location are available.

b) All books by Mr. and Mrs. Tatavarthy are available in PDF format for free download in Telugu, Kannada, Hindi, and English languages.

c) All the messages of Mr. and Mrs. Tatvarthy are organized in concept-wise YouTube playlists.

d) Summaries of Mr. and Mrs. Tatavarthy's messages are provided in the form of quotations.

e) The gallery of Mr. and Mrs. Tatavarthy is also available.

For registration of a 3 day free meditation and soul-knowledge training classes held in Bhimavaram on the 1st, 2nd, and 3rd of every month, contact Sindhura, 8555995217.

Tatavarthy Raghavarao Sir Books in English

1.	Soul Science	Rs.160
2.	Life Science (Part-I)	Rs.120
3.	Who is God?	Rs.110
4.	Why Guiding is Not Meditation ?	Rs.100
5.	Which is the right meditation ?	Rs.100
6.	Die before death!	Rs.120
7.	The Law of Karma	Rs.100
8.	Losses caused by Desires	Rs.100
9.	Benefits of knowing what happens after death	Rs.100
10.	What is Meditation?	Rs.80
11.	True Path	Rs.80
12.	Metaphorical Messages of Wisdom	Rs.80
13.	Why soul-knowledge ?	Rs.70
14.	What comes after death ?	Rs.70
15.	Learnings through the male and female births	Rs.70
16.	Who are Soul-murderes?	Rs.70
17.	Three Types	Rs.70
18.	How to improve Financial Status ?	Rs.60
19.	Wisdom is attained only through Meditation	Rs.60
20.	Brahma Jnan	Rs.60
21.	What is Intention?	Rs.50
22.	Why is this life?	Rs.50
23.	Shankaracharya's Jagrata panchakam	Rs.50
24.	Vegetarian Food Is Human Food	Rs.50
25.	Brahman means?	Rs.50
26.	How to become a master?	Rs.50
27.	How to become a champion ?	Rs.50
28.	Truth	Rs.50
29.	Three Types of Lives	Rs.50
30.	Are we residents of this world or the other world?	Rs.40
31.	Meditation for the Development of Students	Rs.40
32.	Non violence and vegetarianism	Rs.40
33.	How to prevent conflicts between husband and wife?	Rs.40

REBIRTH (Tatavarthy Rajya Lakshmi)	Rs.150
What is Ignorance (Avidya) ?	Rs.70

श्री तटवर्ती वीर राघवराव के हिन्दी किताब

1.	आत्म शास्त्र ।	Rs.200/-
2.	ध्यान विद्या ।	Rs.160/-
3.	भगवद गीता का सार ।	Rs.160/-
4.	सत्य मार्ग ।	Rs.160/-
5.	मरने से पहले मरना है।	Rs.130/-
6.	गाईडिंग ध्यान क्यों नहीं ?	Rs.120/-
7.	भगवान कौन है।	Rs.120/-
8.	कर्म सिद्धांत ।	Rs.120/-
9.	विज्ञान का अर्थ – निहितार्थ ।	Rs.120/-
10.	ब्रह्म ज्ञान ।	Rs.100/-
11.	यह जीवन क्यों है ?	Rs.100/-
12.	मेहर बाबा का संदेश ।	Rs.100/-
13.	कौन सा ध्यान सही है ?	Rs.100/-
14.	इच्छाओं के कारण होने वाली हानियाँ	Rs.100/-
15.	शंकराचार्य जी का ज्ञान संदेश	Rs.100/-
16.	कठोपनिषद्	Rs.100/-
17.	उपमान ज्ञान संदेश	Rs.100/-
18.	शिरडी साई के संदेशों	Rs.100/-
19.	मरने के बाद, साथ में आने वाले विषयों ।	Rs.80/-
20.	भगवत के दृश्यों का अर्थ ।	Rs.80/-
21.	मन – 01	Rs.80/-
22.	आत्म हंतक कौन होता है ।	Rs.70/-
23.	स्त्री जन्मों में सीखने वाले विषयों, पुरुष जन्मों में सीखने वाले विषयों।	Rs.70/-
24.	दुख निवारण का मार्ग	Rs.75/-
25.	उत्तम पुरूष	Rs.60/-
26.	आर्थिक स्थिति बढाना है तो ?	Rs.60/-
27.	निर्वाण मार्ग	Rs.60/-
28.	बुद्धि विकसित होने वालों का व्यवहार।	Rs.60/-
29.	विदुर के संदेशों	Rs.50/-
30.	''जीवन में सफलता प्राप्त करने के लिए ?''	Rs.50/-
31.	सत्य	Rs.50/-
32.	क्या हम इस लोक के वासी हैं या परलोक के वासी हैं ?	Rs.50/-
33.	गुरू को पहचानना कैसे ?	Rs.50/-
34.	विद्यार्थियों के विकास के लिए ध्यान विद्या	Rs.50/-
35.	शाकाहार ही मानव का आहार है!	Rs.50/-
36.	ब्रह्मं क्या है ?	Rs.50/-
37.	शंकराचार्य जी का जाग्रत पंचक	Rs.50/-
38.	शंकराचार्य जी का निर्वाण शट्कम	Rs.50/-
39.	चैंपियन बनना हो तो ?	Rs.50/-
40.	तीन प्रकार के जीवन	Rs.50/-
41.	अहिंसा और शखाहार	Rs.50/-
42.	संकल्प अर्थात ?	Rs.40/-

ध्यान शरीर से संबंधित नहीं है। ध्यान मन से संबंधित है। इसमें शरीर का कोई ज़िक्र नहीं है। सब कुछ मन से संबंधित ही है। शरीर में भी हमें कोई बड़ा बदलाव दिखाई नहीं देता। लेकिन आंतरिक रूप से स्थित ''मन में'' अनेक बदलाव होते रहते हैं। आप ध्यान के बारे में जितनी गहराई से जानेंगे, ध्यान में उतनी ही ''प्रगति'' हासिल करेंगे, लाभ प्राप्त करेंगे। हम कोई भी समस्या लें, कोई भी विषय लें, हम यही कहते हैं कि वह केवल ''ध्यान'' से ही संभव होता है।

एक तरह से देखें तो ऐसा लगता है कि ध्यान का अर्थ मन को नियंत्रित करना ही है। मन एक विचार से दूसरे विचार में, फिर दूसरे विचार से तीसरे विचार में इस तरह इधर-उधर, उधर-इधर डोलता रहता है। ऐसे मन को नियंत्रित करने के लिए किया जाने वाला प्रयास ही पत्रीजी द्वारा बताया गया ''श्वास पर ध्यान'' है। मन को नियंत्रित करना बहुत कठिन लगता है। कारण यह है कि कोई भी चीज आपके नियंत्रण में आ सकती है, लेकिन मन मात्र आपके कहे अनुसार नहीं सुनता। लेकिन जो इसे हासिल कर लेते हैं, मानो उन्होंने समस्त हासिल कर लिया हो। इसीलिए कहा जाता है कि ''दुनिया को जीतने वाले से भी मन को जीतने वाला महान होता है।''

– ब्रह्मर्षि तटवर्ती वीर राघव राव

₹ 80/-

Scan these QR codes using Google Lens to download the books of Mr. Tatavarthy Veera Raghava Rao & Mrs.Rajyalakshmi from the website.

Telugu Books | **English Books** | **Hindi Books** | **Kannada Books** | **Tamil Books**